अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष- 43, अंक- 20, 1-15 जून 2020

दुनिया मे फैलता कोरोना वायरस का महाजाल

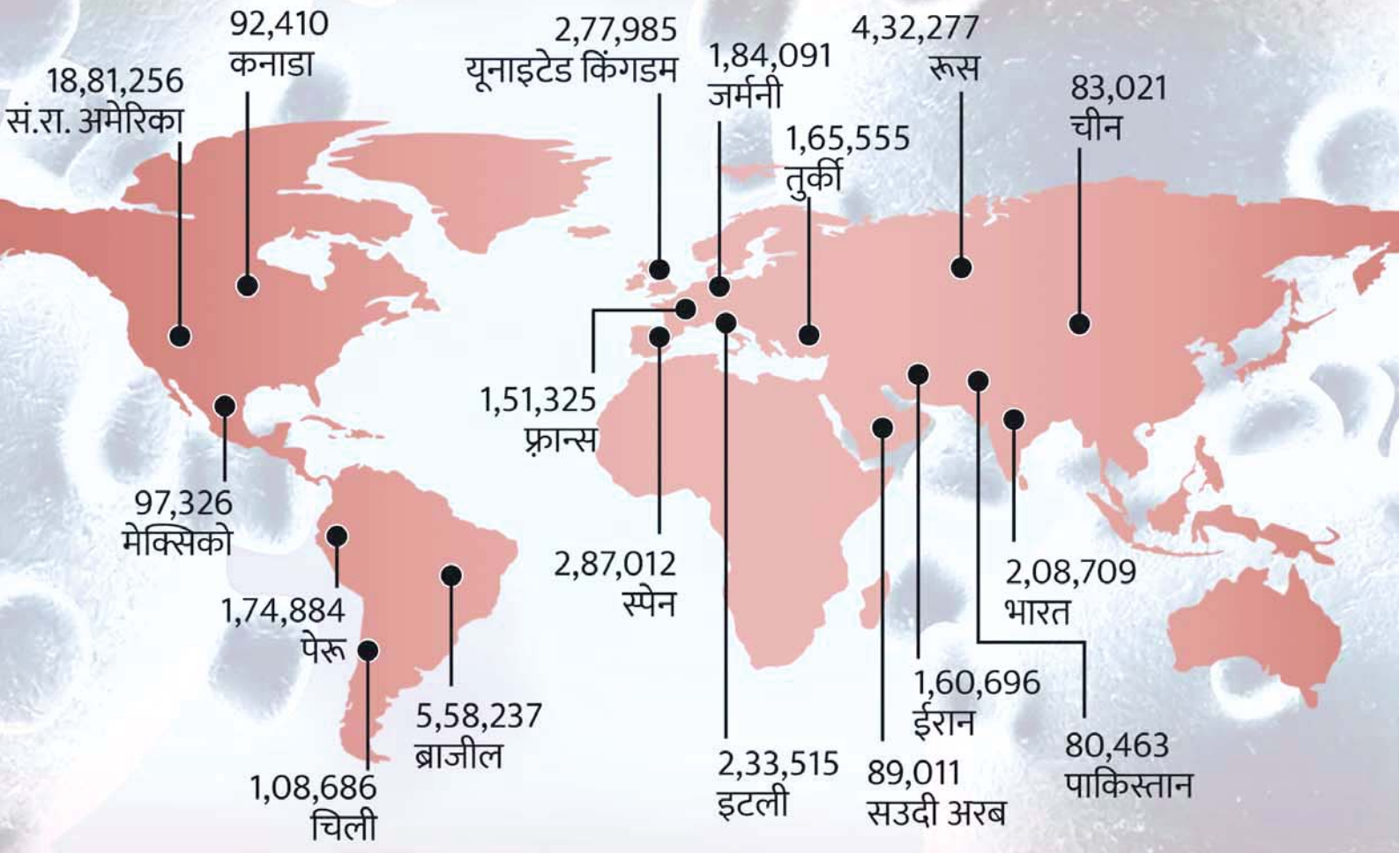

कोरोना वायरस का खौफ इस समय पूरी दुनिया में फैला हुआ है। फिजिकल डिस्टेंसिंग और लॉकडाउन के विश्वव्यापी प्रयोगों से गुजरती हुई दुनिया अभी इसके इलाज की खोज में है। यह पहली बार नहीं है कि दुनिया ऐसी किसी महामारी का सामना कर रही है। अब से 102 साल पहले 1918 में भी ऐसी ही एक महामारी ने पूरी दुनिया मे तबाही मचाई थी। अकेले भारत में ही करीब 14 लाख लोग इस बीमारी की चपेट में आये थे। गांधी जी पर भी स्पेनिश फ्लू का हमला हुआ। तब उन्होंने खुद को अपने आश्रम में ही क्वारन्टीन किया और पूरी तरह प्राकृतिक चिकित्सा पर निर्भर हो गए। वे जल्दी ही स्वस्थ हो गए।

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित
अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक
वर्ष : 43, अंक : 20, 01-15 जून 2020

अध्यक्ष
महादेव विद्रोही

संपादक
बिमल कुमार
सहसंपादक
प्रेम प्रकाश
09453219994
संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह **भवानी शंकर कुसुम**
प्रो. सोमनाथ रोडे **अरविन्द अंजुम**
अशोक मोती

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

एक प्रति	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC Code : UBIN0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. संपादकीय... 2
2. अध्यक्ष की कलम से... 3
3. बिल गेट्स का वैश्विक वैक्सीन एजेंडा... 5
4. जब स्पेनिश फ्लू ने पौने दो करोड़... 7
5. गंगा में कारखानों के प्रदूषण का... 8
6. लोकतंत्र महज व्यवस्था नहीं, संस्कृति... 9
7. लोकसेवकों के नाम अध्यक्ष का पत्र... 10
8. कोरोना वायरस से जंग होमियोपैथी के... 10
9. बिहार की गिरमिटिया मजदूरिनें और... 11
10. कुटीर व ग्रामोद्योगों से ग्राम विकास... 12
11. पांच जून को क्यों याद करें!... 13
12. 1974 के जन आंदोलन की कुछ स्मृतियां... 14
13. संपूर्ण क्रांति के संदर्भ और कसौटी पर... 16
14. श्रद्धांजलियां... 19
15. तीन कविताएं... 20

संपादकीय

संपूर्ण क्रांति और आज की चुनौतियां

आज विश्व भर में जो नयी परिस्थितियां बनी हैं, उसमें संपूर्ण क्रांति के विचार से जुड़े आंदोलनकारियों को आत्ममंथन करके भविष्य की रणनीति तय करनी होगी।

नयी परिस्थिति केवल कोरोना महामारी नहीं है। ये सच है कि इस महामारी ने राजसत्ताओं की बेबसी ही उजागर नहीं की है, बल्कि उनका क्रूर चेहरा भी उजागर कर दिया है। ऐसे में लोक का दायरा मजबूत बनाने का काम आज कहीं अधिक जरूरी है। राजसत्ता ने सम्पन्न एवं प्रभावशाली लोगों को जो सुरक्षा प्रदान की, वैसी संवेदनशीलता किसानों, मजदूरों के प्रति नहीं दिखायी। अपने घरों को वापस लौटने वाले मजदूरों के प्रति तो राजसत्ता का रवैया संवेदनहीनता व क्रूरता से भरा हुआ रहा। निष्कर्ष यह कि स्थिति और भयावह हुई एवं नियंत्रण के बाहर हुई तो मजदूरों एवं किसानों की चिन्ता राजसत्ता कम करेगी। सम्पन्न व प्रभावशाली लोगों की रक्षा करना, राजसत्ता अपना प्रथम दायित्व समझेगी।

विश्व भर में इस स्थिति से ध्यान हटाने के लिए शीतयुद्ध तेज किया जा रहा है। चीन और अमेरिका, चीन और भारत, ईरान और अमेरिका आदि कुछ देशों के बीच युद्ध का माहौल गरम बनाया जा रहा है। शीतयुद्ध का दो ही लक्ष्य होता है। एक, युद्धोन्माद पैदा करना, जिसमें देश के अन्य ज्वलंत मुद्दे नेपथ्य में चले जायें तथा दूसरा हथियारों की होड़, जिससे एक विशेष वर्ग लाभान्वित होता है। कोरोना के प्रति सरकार का दृष्टिकोण बदला जा रहा है। जिस पर 21 दिनों में विजय प्राप्त कर लेने का आश्वासन दिया गया था, अब बताया जा रहा है कि उसके साथ रहने की आदत डाल लें। संक्रमित होने वालों और मरने वालों की संख्या केवल एक संख्या बनती जा रही है। हम समाचार के उपभोक्ता होते जा रहे हैं। देश और दुनिया में कितने लोग मरे, इसकी चर्चा हम ऐसे करते हैं, जैसे हम मृत्यु नहीं, किसी अन्य चीज के बारे में बात कर रहे हैं। हमारी संवेदनशीलता इन बढ़ते आंकड़ों के बीच भोथरी होती जायेगी। तब युद्धोन्माद हमें राष्ट्रभक्ति का नया मंत्र देगा। नफरत के नये-नये निशाने हमारी 'देशभक्ति' का प्रतीक बनते जायेंगे। इस माहौल के खिलाफ मजदूरों व किसानों को एकजुट कर उनके संघर्षों के माध्यम से राष्ट्रभक्ति और राष्ट्रीय एकता के विचार को प्रमुखता से स्थापित करना होगा। इस दौर का दूसरा महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि विश्व भर में गिरती अर्थव्यवस्थाएं और अधिक निचले स्तर पर जायेंगी। दुनिया भर में वित्तीय सहायता देने वाले पैकेज मुख्य रूप से कारपोरेट जगत को बचाये रखने के लिए हैं। जिनका आर्थिक नियंत्रण मजबूत था, वे अपेक्षाकृत कमजोर राष्ट्रों को और कमजोर करेंगे। इसी प्रकार राष्ट्रों (विशेषकर कमजोर होते राष्ट्रों) के अंदर असंगठित क्षेत्र पर आर्थिक गिरावट की सबसे बड़ी मार पड़ेगी। भारत में ही, आर्थिक ढांचे में कोई सुधार किये बिना, 20 लाख करोड़ का पैकेज एक छलावा साबित होगा। यह पैकेज एक तात्कालिक वित्तीय सहारा है, जिसका अधिकांश हिस्सा कारपोरेट जगत के पक्ष में जायेगा। अन्य सेक्टर के लोग जब इस मृग मरीचिका से बाहर आयेंगे, तो तीन माह बाद अपने को और अधिक बुरी स्थिति में पायेंगे। ऐसे में मजदूर, किसान व असंगठित क्षेत्र के अन्य कर्मकार व्यापक बेरोजगारी व गहरी गरीबी के दलदल में चले जायेंगे। ऐसे में ग्राम-स्वावलंबन आधारित स्वदेशी को खड़ा करने का काम आंदोलन से जुड़े रचनात्मक कार्यकर्ताओं को उठाना होगा। सामुदायिकता को खड़ा करना होगा।

यदि सामुदायिकता व उसके मूल्य नहीं स्थापित करेंगे तो संकीर्ण व स्वार्थी व्यक्तिवाद हमें और पतन की ओर ले जायेगा। मूल्यहीनता एवं मानवीय संवेदना में गिरावट से इस आसन्न महासंकट में राजसत्ता अधिकाधिक क्रूर एवं फासीवादी होती जायेगी तथा जनता में संगठित प्रतिरोध की क्षमता कम होती जायेगी। स्थानीय स्तर पर हिंसा और लूट का तांडव फैलाने वाले ही, जन-प्रतिनिधित्व का दावा करेंगे। युद्धोन्माद एवं नफरत की राजनीति से उन्हें बल मिलेगा। ऐसे में संपूर्ण क्रांति से जुड़ी आंदोलनकारी जमातों को उन सभी ताकतों को एक मंच पर लाने का प्रयास करना होगा जो लोकतंत्र, शांतिमयता एवं राष्ट्रीय एकता के प्रति प्रतिबद्ध हैं।

संपूर्ण क्रांति आंदोलन के परिणामस्वरूप इमरजेंसी के खिलाफ एक राष्ट्रीय एकता बनी थी। संपूर्ण क्रांति दिवस पर हम समझें कि जन संघर्षों की राष्ट्रीय एकता सबसे जरूरी कदम है, जिसके माध्यम से हम वैश्विक व राष्ट्रीय चुनौती का सक्षम किन्तु अहिंसक तरीके से सामना कर सकेंगे।

–बिमल कुमार

अध्यक्ष की कलम से

पहले रेल की पटरियों पर, अब रेलगाड़ियों में मर रहे श्रमिक

❑ महादेव विद्रोही

पिछले दिनों देश के अलग-अलग भागों से श्रमिक स्पेशल नाम से कुछ गाड़ियां चलायी गयीं। इस कदम का स्वागत है। वास्तव में यह कदम लॉकडाउन शुरू होते ही उठाया जाना चाहिए था। इससे अनेक श्रमिकों की जान तो बचती ही, साथ ही अनेक लोग संक्रमण से भी बचते।

पिछले सप्ताह श्रमिक स्पेशल ट्रेनों का जो हाल हुआ, वह शायद इतिहास का एक काला अध्याय साबित होगा। 17 मई को गुजरात के सूरत से बिहार के सिवान के लिए श्रमिक स्पेशल चली। इसे दूसरे दिन सिवान पहुंचना था, पर यह 8वें दिन यानी 25 मई को सिवान पहुंची। इसके बारे में सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है कि 45 डिग्री तापमान में ट्रेन में बैठे-बैठे यात्रियों का क्या हाल हुआ होगा।

ये स्पेशल गाड़ियां रास्ते में नहीं रुकतीं, सिवाय तकनीकी कारणों के। अगर कहीं रुकती भी हैं, तो यात्रियों को प्लेटफार्म पर उतरने, पानी या खाने का कुछ सामान लेने की अनुमति नहीं होती है। मैं इस गाड़ी से जाने वाले यात्रियों की मनोदशा के बारे में सोचकर कांप उठता हूं। ऐसी ही एक गाड़ी मुम्बई से झारखंड के कोडरमा के लिए चली, जो 31 घंटे विलम्ब से पहुंची। एक और गाड़ी, जिसे उड़ीसा जाना था, बंगलोर पहुंच गयी। गोरखपुर जाने वाली गाड़ी राउरकेला पहुंची गयी। यह कैसे हुआ, यह मेरी समझ के बाहर है। रेल का चालक अपनी मर्जी के अनुसार गाड़ी नहीं चलाता। उसे जिस लाइन पर चलाया जाता है, वह उसी लाइन पर गाड़ी ले जाता है। एक चालक 8 घंटे की ड्यूटी करता है। बंगलोर पहुंचने तक कितने ही ड्राइवर बदले होंगे। इसका मतलब है कि यह किसी योजना का भाग था और यात्रियों को सबक सिखाने की दृष्टि से उठाया गया सोचा-समझा कदम था। विभिन्न समाचार चैनलों से प्राप्त रिपोर्टों के अनुसार 9 से 27 मई के बीच 80 श्रमिकों ने भूख और गर्मी से ट्रेन में ही दम तोड़ दिया। भारतीय रेल में प्रतिदिन 13 हजार से अधिक गाड़ियां चलती हैं। अभी मात्र कुछ सौ स्पेशल गाड़ियों के चलने से पूरी व्यवस्था का चरमरा जाना समझ के बाहर है।

देश में कोरोन्टाइन सेन्टर्स के बारे में भी अच्छी खबर नहीं मिल रही है। एक जगह से दूसरी जगह जाने पर लोगों को इंस्टीट्यूशनल कोरोन्टाइन में 14 दिन के लिए रखा जाता है। भले ही वे पूरी तरह स्वस्थ ही क्यों न हों। इन लोगों के साथ प्रशासन अपराधियों जैसा व्यवहार कर रहा है। कई जगहों से समाचार मिल रहे हैं कि कोरन्टाइन में रहने वालों को न तो ठीक से भोजन दिया जाता है और न ही वहां कोई स्वास्थ्य सेवा ही उपलब्ध है। इसके कारण स्थिति और बिगड़ती जा रही है।

कोरोना और अर्द्धसैनिक बल

अहमदाबाद के कुछ क्षेत्रों में करीब दो सप्ताह पहले अर्द्धसैनिक बलों को बुलाया गया। कहा जाता है कि ये रेड जोन थे। मैं सोचता रहा कि कोरोना संक्रमित क्षेत्रों में अर्द्धसैनिक बलों की क्या जरूरत हो सकती है। संक्रमित क्षेत्रों में तो अनुभवी डाक्टरों और पैरामेडिकल स्टाफ को बुलाया जाना चाहिए था। अभी देश में तालाबंदी का

चौथा चरण चल रहा है और इन पंक्तियों को लिखने तक लगभग 5 हजार से अधिक लोगों की मृत्यु हो चुकी है तथा संक्रमितों की संख्या 2 लाख के करीब पहुंच रही है। संक्रमण फैलने की रफ्तार बढ़ती ही जा रही है। यानी तालाबंदी के कारण कोरोना का प्रसार रुका नहीं है।

पिछले दिनों भारत सरकार के भूतल परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री नितिन गडकरी ने कहा कि कोरोना का वायरस चीन की प्रयोगशाला में तैयार किया गया है। और अभी 17 मई को इटली की संसद में रोम की सांसद सारा कुनियल ने इसे एक वैश्विक षड्यंत्र बताते हुए इसके लिए एक फाउंडेशन को जिम्मेदार ठहराया है। शायद आने वाले दिनों में इन रहस्यों पर से पर्दे उठेंगे और लोगों को वास्तविकता का पता चलेगा।

लोगों का धैर्य अब जवाब दे चुका है। पिछले दिनों भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के निदेशक ने कहा है कि भारत में कोरोना वायरस जुलाई अगस्त में अपने चरम पर होगा। कई राज्य सरकारें अभी से तालाबंदी की अवधि बढ़ाने की मांग कर रही हैं। अगर ऐसा हुआ तो अर्थव्यवस्था का जो होना होगा, वह तो होगा ही, पर आम लोगों का जीना दुष्कर हो जायेगा। सरकार और समाज को इस बीमारी से लड़ने के नये और कारगर उपाय ढूंढ़ने होंगे।

पिछले दिनों कोरोना वायरस में गुजरात सरकार की भूमिका को लेकर गुजरात हाईकोर्ट ने कहा है कि डॉक्टर कोरोना के मरीज को देखते नहीं हैं, बल्कि उससे बचने की कोशिश करते रहते हैं। अहमदाबाद के सिविल हॉस्पिटल में, जहां सबसे ज्यादा मौतें हुई हैं, पर टिप्पणी करते हुए उच्च न्यायालय ने कहा है कि यहां की स्थिति काल कोठरी या उससे भी बदतर है। साथ ही उन्होंने अपनी नाराजगी व्यक्त करते हुए अपनी टिप्पणी में कहा है कि कोरोना के मरीजों के साथ पशुओं जैसा व्यवहार हो रहा है। यह एकमात्र टिप्पणी पूरी स्थिति की गंभीरता को समझने के लिए काफी है।

इतिहासकार रामचन्द्र गुहा के अनुसार देश विभाजन के बाद अबतक के सबसे बड़े संकट से गुजर रहा है। हम आशा करते हैं कि जैसे हमने अनेक आफतों पर विजय पायी है, वैसे ही इस विपत्ति पर भी विजय पायेंगे और इसके लिए सरकारें जनता का सहयोग करेंगी।

गांधी के अपमान का नया दौर फिर से शुरू

कल सेवाग्राम आश्रम के भूतपूर्व मंत्री विनोद स्वरूप का फोन आया। उन्होंने बताया कि उनके पास कई लोगों के व्हाट्सअप संदेश आते रहते हैं, जिसमें राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के विरुद्ध अपमानजनक व अश्लील बातें कही गयी हैं। साथ ही उसे दूसरे लोगों तक फारवर्ड करने के लिए भी कहा जाता है। इन संदेशों में गांधी के हत्यारों का गुणगान और मुसलमानों के विरुद्ध विषवमन खास दिखायी पड़ते हैं। पिछले वर्ष जब अलीगढ़ में बापू की तस्वीर को गोली मारकर खून बहाया गया, तब मैंने इस संबंध में राष्ट्रपति महोदय को एक पत्र लिखकर सर्व सेवा संघ के एक प्रतिनिधि मंडल के लिए मुलाकात का समय मांगा था। पत्र की प्रतिलिपि उनके सचिव तथा उनके सैनिक अटैची को भी भेजा था। पत्र लिखे महीनों बीत

गये हैं, पर राष्ट्रपति भवन से उसका कोई उत्तर नहीं आया। क्या हम यह मानें कि गांधी के विरुद्ध जो कुछ चल रहा है, वह राष्ट्रपति महोदय को भी पसंद है?

कोरोना महामारी के कारण केन्द्र सरकार आज कठघरे में है। इस बात से लोगों का ध्यान हटाने के लिए यह एक नया अभियान शुरू किया गया है। इस बार भी केन्द्र सरकार चुप है। मुझे कई लोग सोशल मीडिया में उठाये जा रहे इन मुद्दों का जवाब देने के लिए कहते रहते हैं। इसमें दो तरह की राय है। पहली बात तो यह कि इस तरह की फिजूल बातों का जवाब देना उसका महत्त्व बढ़ाने जैसा है। दूसरे हमारे पत्र-पत्रिकाओं में तथा पुस्तकों में इसके बारे में विस्तारपूर्वक काफी कुछ कहा जा चुका है। ❑

समग्र क्रांति के लिए बढ़े चलो

❑ श्यामबहादुर 'नम्र'

समग्र क्रांति के लिए, बढ़े चलो, बढ़े चलो।
चलो कि ऊंच-नीच, जाति-भेद का विनाश हो,
सभी को मिल सके खुशी, न कोई मन उदास हो।
समत्व-शांति के लिए, बढ़े चलो, बढ़े चलो, समग्र-क्रांति के...

विकास हो मगर किसी का हक, कभी छिने नहीं,
बंटे प्रकाश हर जगह, न अंधकार हो कहीं।
चलो कि लूट के खिलाफ, युद्ध तुम लड़े चलो। समग्र-क्रांति के...

थके, गिरे जो आज हैं, वो क्रांति-वीर बन सकें,
दमन की ताकतों के सामने, निडर जो तन सकें,
उन्हीं के वास्ते नया समाज तुम गढ़े चलो। समग्र-क्रांति के...

हरे-भरे वनों का जिस तरह विनाश हो रहा,
अकाल, बाढ़ से उजाड़ हो रही वसुंधरा।
गगन में चिमनियां मिलों की हैं धुआं उगल रहीं,
नदी को गंदी नालियां जहर में हैं बदल रहीं।
गलत विकास की दिशा के सामने अड़े चलो। समग्र-क्रांति के...

बिल गेट्स का वैश्विक वैक्सीन एजेंडा

अनिवार्य टीकाकरण का अंतर्राष्ट्रीय महाजाल

❑ रॉबर्ट एफ कैनेडी जूनियर

इटली की संसद में रोम की सांसद सारा कुनियल द्वारा 17 मई को दिया गया भाषण वायरल हो रहा है। कोविड-19 के बैश्विक संदर्भों में सदन को संबोधित करते हुए उन्होंने बिल गेट्स एंड मिलिण्डा फाउण्डेशन के अंतर्राष्ट्रीय वैक्सीन व्यापार पर उसके निहित उद्देश्यों और शुचिता को लेकर सवाल खड़े किये हैं। दुनिया भर के देशों में बीमारियों की रोकथाम के नाम पर बनायी जाने वाली विभिन्न वैक्सीन्स का लोकहित के नाम पर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार करने वाले विलगेट्स को सारा कुनियल ने वैक्सीन माफिया कहा। उन्होंने भारत में वैक्सीन की आजमाइश के लिए टारगेट की गयी लाखों बच्चियों की मृत्यु का भी जिक्र किया। प्रस्तुत है गेट्स के अंतर्राष्ट्रीय वैक्सीन व्यापार और डब्ल्यूएचओ की भूमिका का विश्लेषण करता हुआ राबर्ट एफ कैनेडी जूनियर का यह आलेख। जूनियर एक अमरीकी अधिवक्ता होने के साथ-साथ सामाजिक सरोकारों से जुड़े ऐक्टिविस्ट भी हैं। **–सं.**

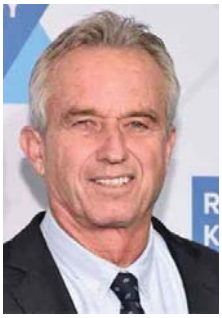

समाज कल्याण के कार्यों की सूची में व्यापक टीकाकरण अभियान, बिल गेट्स की एक प्रिय रणनीति रही है। यह उनके वैक्सीन संबंधी शोध को प्रोत्साहन देने जैसे कार्यों से तो जुड़ी ही है, साथ ही वैश्विक स्वास्थ्य नीतियों को नियंत्रित करने की उनकी महत्वाकांक्षा को भी पोषित करती है। गेट्स का टीकाकरण के प्रति यह लगाव उनकी इस धारणा के कारण भी है कि, उन्हें यह दृढ़ विश्वास है कि, तकनीक ही विश्व को सुरक्षित रख सकती है।

भारत के पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम के कुल 1.2 बिलियन डॉलर के बजट में बिल गेट्स 450 मिलियन डॉलर का अंशदान कर के नेशनल टेक्निकल एडवाइजरी ग्रुप (एनटीएजीआई) के एक प्रकार से नियंत्रक बन जाते हैं और पांच वर्ष तक के बच्चों के लिए पोलियो वैक्सीन या टीका की खुराक, सभी टीकाकरण कार्यक्रमों और सलाहों को नज़रअंदाज़ कर, पचास खुराक तक देने का निर्णय ले लेते हैं। डॉक्टरों के अनुसार, इस निर्णय के कारण, बच्चों में विनाशकारी नॉन पोलियो एक्यूट फ्लैक्सीड पैरालिसिस (एनपीएएफपी) महामारी की शिकायत पायी गयी। इसके लिए बिल गेट्स के इस निर्णय को डॉक्टरों ने उत्तरदायी ठहराया। इस बढ़ी हुई खुराक या अतिरंजित टीकाकरण से वर्ष 2000 से 2017 के बीच कुल 4,90,000 बच्चे प्रभावित हुए। सरकार ने जब इस महामारी की आहट सुनी तो, उसने बिल गेट्स के इस टीकाकरण कार्यक्रम को बंद कर दिया और बिल गेट्स तथा उनकी वैक्सीन नीति को देश से विदा कर दिया।

हालांकि वर्ष 2017 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने दबाव में यह तथ्य स्वीकार किया कि दुनिया भर में जो पोलियोजन्य महामारी फैली थी, वह इसी टीकाकरण की अनावश्यक बाध्यता और बढ़ी खुराक का भी परिणाम थी। पोलियो से जुड़ी सबसे बड़ी महामारी कांगो, अफ़ग़ानिस्तान और फिलीपींस में फैली थी, और यह सब उसी वैक्सीन के कारण हुआ था। सच तो यह है कि साल 2018 तक विश्व के समस्त पोलियो का 70% मामला इसी वैक्सीन तनाव के कारण हुआ, जो अधिक मात्रा में कई कई बार बच्चों को दी गयी थी।

गेट्स फाउंडेशन द्वारा वित्तपोषित कंपनी, ग्लैक्सो स्मिथ क्लिन (जीएसके) और मर्क द्वारा विकसित की गयी एचपीवी वैक्सीन को परीक्षण के रूप में, भारत के विभिन्न राज्यों में, वर्ष 2014 में, 23,000 लड़कियों पर आजमाया गया था। इस परीक्षण टीकाकरण के कारण, वैक्सीन के दुष्प्रभाव से, इनमें से लगभग 1,200 लड़कियां गर्भाधान और ऑटोइम्यून जैसी समस्याओं से पीड़ित हो गयीं। जिनमें से सात लड़कियों की मृत्यु हो गयी। इसकी जांच जब सरकार द्वारा कराई गयी, तब यह तथ्य प्रकाश में आया कि गेट्स द्वारा वित्तपोषित शोधकर्ताओं ने जानबूझकर व्यापक रूप से परीक्षण की नैतिकता और निर्देशों का उल्लंघन किया है। ऐसा उन्होंने इन लड़कियों का परीक्षण के लिए चयन करते समय इनके माता पिता को धमका कर, फ़र्ज़ी सहमति पत्र पर हस्ताक्षर करा कर किया है। परीक्षण के दौरान जो लड़कियां घायल या बीमार हो गयीं, उनके इलाज की समुचित व्यवस्था भी फाउंडेशन द्वारा नहीं की गयी। इसी गेट्स फाउंडेशन ने जीएसके द्वारा मलेरिया की वैक्सीन के तृतीय चरण के परीक्षण के लिए, वर्ष 2010 में धन दिया, जिसके परीक्षण के दौरान, 151 अफ्रीकी शिशुओं की मृत्यु हो गयी और कुल 5,949 शिशुओं में से, जिन पर इस टीके का परीक्षण किया गया था, 1,048 शिशुओं को जकड़न, ऐंठन और तेज बुखार जैसी बीमारी होने लगी।

अफ्रीका के निम्न सहारा क्षेत्रों में मेनअफ्रिवेक अभियान के अंतर्गत, वर्ष 2002 में, गेट्स फाउंडेशन ने मस्तिष्क रोग की वैक्सीन के परीक्षण हेतु एक टीकाकरण का अभियान बलपूर्वक चलाया था। ऐसे 500 बच्चों में से, जिन्हें यह वैक्सीन दी गयी थी, 50 बच्चे लकवाग्रस्त हो गए। इस संबंध में एक दक्षिण अफ्रीकी अखबार ने इस बलात टीकाकरण अभियान की शिकायत करते हुए लिखा था कि, 'हम दवा निर्माताओं के लिए गिनी पिग (एक छोटा जानवर, जिस पर दवाइयों के परीक्षण होते हैं) बन गए हैं।'

प्रोफेसर पैट्रिक बांड, जो दक्षिण अफ्रीका के पूर्व राष्ट्रपति नेल्सन मंडेला के वरिष्ठ आर्थिक सलाहकार रह चुके हैं, ने बिल गेट्स के इन समाज कल्याण के कार्यों को क्रूर और अनैतिक कहा है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन को, वर्ष 2010 में कुल 10 बिलियन डॉलर की धनराशि देते हुए गेट्स फाउंडेशन ने कहा था कि, 'हमें इस दशक को वैक्सीन के दशक के रूप में बनाना होगा।' एक महीने बाद ही टेड टॉक शो में गेट्स ने एक बातचीत में कहा था कि, 'नए टीके जनसँख्या कम करने में सहायक हो सकते हैं।' केन्या के कैथोलिक डॉक्टर्स एसोसिएशन ने वर्ष 2014 में विश्व स्वास्थ्य संगठन पर यह आरोप लगाया था कि संगठन द्वारा न चाहते हुए भी लाखों केनियाई महिलाओं का टिटनेस वैक्सीन अभियान के अंतर्गत टीकाकरण किये जाने से उनमें बाँझपन आ गया है। इस वैक्सीन की जांच करने वाली कुछ स्वतंत्र प्रयोगशालाओं ने, वैक्सीन के अंदर गर्भधारण न होने देने वाले एक पदार्थ की पहचान की, जिससे महिलाओं में बंध्यता होने की आम शिकायतें होती हैं । प्रारंभ में तो विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इन आरोपों को खारिज कर दिया पर, अंत में उसने यह स्वीकार कर लिया कि वे बंध्याकरण करने वाली वैक्सीन को ही पिछले एक दशक से विकसित कर रहे थे। इसी प्रकार के आरोप, तंजानिया, निकारागुआ, मेक्सिको और फिलीपींस मे चलाये गए विश्व स्वास्थ्य संगठन के टीकाकरण अभियानों के संबंध में भी लगे है।

मोरजेंसन-2017 के एक शोध अध्ययन में यह पाया गया कि विश्व स्वास्थ्य संगठन की लोकप्रिय वैक्सीन डीटीपी के टीके से जितने अफ्रीकी बच्चे मरे, उतने तो उन रोगों से भी नहीं मरते, जिन रोगों से बचाव के लिए वह वैक्सीन विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा बनाई और लगाई गयी थी। डीटीपी वैक्सीन से प्रभावित होकर मरने वाले बच्चों की संख्या, उन बच्चों की तुलना में, जिन्हें वैक्सीन नहीं दी गयी थी, दस गुना अधिक थी। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इस जानलेवा वैक्सीन को वापस लेने से भी इनकार कर दिया, जो हज़ारों, लाखों बच्चों को इतने घातक परिणाम मिलने के बाद भी दी जा रही थी।

दुनिया भर में जन स्वास्थ्य के पक्ष में अपनी आवाज़ उठाने वाले लोगों ने बिल गेट्स और विश्व स्वास्थ्य संगठन पर जन स्वास्थ्य के मूल मुद्दों व संक्रामक रोगों से बचाव, स्वच्छ पेय जल की सुविधा, स्वच्छता, स्वस्थ जीवन, पोषण, और आर्थिक विकास से जुड़ी परियोजनाओं से भटका देने का आरोप लगाया है। गेट्स फाउंडेशन ने इन क्षेत्रों में निर्धारित 5 बिलियन डॉलर के बजट में से केवल 650 मिलियन डॉलर ही व्यय किया है। जन स्वास्थ्य के इन समर्थकों का कहना है कि बिल गेट्स ने विश्व स्वास्थ्य संगठन के संसाधनों का दुरुपयोग किया है। संगठन की दिशा को, गेट्स ने अपनी उस सोच की ओर कि अच्छे स्वास्थ्य के लिए केवल टीकाकरण ही ज़रूरी है, मोड़ दिया।

अपनी लोक और समाज कल्याणकारी योजनाओं के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) यूनिसेफ, जीएवीआई, और पीएटीएच आदि वैश्विक संस्थाओं को अपने आर्थिक प्रभाव में लेने के बाद, बिल गेट्स ने वैक्सीन बनाने वाली एक फार्मास्युटिकल कंपनी में धन निवेश किया है और साथ ही 50 मिलियन डॉलर की धनराशि, अन्य 12 फार्मास्युटिकल कंपनियों, जो दवा बनाती हैं, को भी दिया है, ताकि वे कोरोना वायरस का संक्रमण रोकने के लिए वैक्सीन बना सकें। हाल ही में मीडिया से बात करते हुए उन्होंने यह विश्वास भी जताया है कि कोविड-19 का यह संकट, उनके लिए बाध्यकारी टीकाकरण कार्यक्रमों को लागू करने के लिए एक अवसर के रूप में सामने आया है।

मूल अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद-विजयशंकर सिंह, अवकाश प्राप्त आईपीएस अधिकारी

बिल गेट्स मानवता के खिलाफ़ अपराध में लिप्त हैं। उन्हें तत्काल गिरफ़तार किया जाना चाहिए!

-सारा कुनियल

इटली की एक महिला सांसद ने यह मांग करके सबको चौंका दिया है कि माइक्रोसाफ्ट के संस्थापक बिल गेट्स को गिरफ़तार कर लिया जाना चाहिए क्योंकि वह मानवता के खिलाफ़ अपराध में लिप्त हैं।

सांसद सारा कुनियल ने 17 मई को इटली की संसद में कहा कि बिल गेट्स दरअसल वैक्सीन अपराधी हैं। सारा ने जिस तरह संसद में भाषण दिया, वह पूरी दुनिया में अपूर्व बताया जा रहा है। सारा कुनियल ने कहा कि यदि कोविड-19 के किसी भी वैक्सीन का अभियान चलाया जाता है, तो सारे सांसदों को इसका विरोध करना चाहिए क्योंकि इस प्रकार के टीका अभियान भ्रष्टाचारी तत्व चला रहे हैं। सारा कुनियल का कहना था कि बिल गेट्स कई दशकों से दुनिया भर में आबादी घटाने और तानाशाही बढ़ाने की योजनाओं पर काम कर रहे हैं।

कुनियल पहले से ही टीकाकरण अभियान के खिलाफ़ सक्रिय रही हैं। उनका कहना है कि बिल गेट्स की संस्था भारत और अफ्रीक़ी देशों में जो टीकाकरण अभियान चला रही है, उससे लाखों की संख्या में महिलाएं बांझ और बच्चे पैरालाइज़ होते जा रहे हैं। *-बीबीसी लाइव*

जब स्पेनिश फ्लू ने पौने दो करोड़ भारतीयों की जान ले ली थी

कोरोना वायरस का खौफ इस समय पूरी दुनिया में फैला हुआ है. अभी तक इस जानलेवा वायरस की वजह से लगभग चार लाख लोगों की जान जा चुकी है. ये पहली बार नहीं है कि दुनिया ऐसी किसी महामारी का सामना कर रही है. अब से 102 साल पहले 1918 में भी ऐसी ही एक महामारी ने पूरी दुनिया में तबाही मचाई थी. अकेले भारत में ही तब करीब 14 लाख लोग इस बीमारी का शिकार हुए थे. गांधीजी भी उस महामारी की चपेट में आ गए थे. तब उन्होंने गुजरात के अपने आश्रम रहकर ही उस महामारी को मात दी थी.

दुनिया पहले विश्वयुद्ध से बाहर निकली ही थी कि 1918 में स्पेनिश फ्लू ने तबाही शुरू कर दी. एक अनुमान के मुताबिक, दुनियाभर में स्पेनिश फ्लू के कारण करीब 10 करोड़ लोगों की मौत हो गई थी. 1918 में गांधीजी को भी स्पेनिश फ्लू हो गया था. तब उन्हें दक्षिण अफ्रीका से लौटे हुए चार साल गुजर चुके थे. उस वक्त उनकी उम्र 48 साल थी. फ्लू होने पर उन्हें आराम करने को कहा गया था. इसके बाद वह लिक्विड डाइट पर चले गए. और जल्द ही स्वस्थ हो गए. इस दौरान आश्रम में रहने वाले सभी लोगों ने नियमों का पालन किया. इससे आश्रम में रहने वाले सभी लोग स्पेनिश फ्लू से बच गए. गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में रहने के दौरान प्लेग का भी जमकर मुकाबला किया था. उस दौरान उन्होंने गौटेंग प्रांत में स्वयंसेवक के तौर पर दक्षिण अफ्रीका में काम किया था. सामुदायिक कार्यकर्ता लिन वान डेर शिफ ने कहा था कि जोहानिसबर्ग में प्लेग के प्रकोप की पहचान करने में गांधीजी की भूमिका बहुत अहम थी. अगर उनके सुझाव पर अमल नहीं किया गया होता तो बीमारी का प्रसार बहुत भयानक होता.

गांधीजी और आश्रमवासी किस्मत के धनी थे कि वे सब बच गए. हिंदी के मशहूर लेखक और कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की पत्नी और घर के कई दूसरे सदस्य भी इस बीमारी की भेंट चढ़ गए थे. उन्होंने लिखा था कि पलक झपकते ही मेरा परिवार मेरी आंखों से ओझल हो गया. उन्होंने तब के हालात के बारे में लिखा कि गंगा नदी शवों से पट गई थी. चारों तरफ इतने शव थे कि उन्हें जलाने के लिए लकड़ी कम पड़ रही थी. खराब मानसून की वजह से सूखा पड़ने के बाद हालात और बिगड़ गए. लोग और कमजोर होने लगे. उनकी प्रतिरोधक क्षमता कम हो गई. शहरों में भीड़ बढ़ने लगी. इससे बीमार पड़ने वालों की संख्या भी बढ़ गई.

इस फ्लू की चपेट में आए मरीजों को बुखार तथा हड्डियों व आंखों में दर्द की

शिकायत होती थी. रेलवे लाइन शुरू होने की वजह से देश के दूसरे हिस्सों में भी ये बीमारी तेजी से फैल गई. बाद में असम में इस फ्लू का एक इंजेक्शन तैयार किया गया, जिससे कथित तौर पर हजारों मरीजों का टीकाकरण किया गया. इससे इस बीमारी को रोकने में कुछ कामयाबी मिली.

माना जाता है कि यह फ्लू बॉम्बे (अब मुंबई) में लौटे सैनिकों के जहाज से पूरे देश में फैला था. तत्कालीन अंग्रेज हेल्थ इंस्पेक्टर जेएस टर्नर के मुताबिक, इस फ्लू का वायरस चुपके से भारत में घुसा और तेजी से फैल गया. उसी साल सितंबर में यह महामारी दक्षिण भारत के तटीय क्षेत्रों में फैलनी शुरू हो गई. हालांकि, आधिकारिक रिपोर्ट में 14 लाख भारतीयों के इस बीमारी से मरने की बात कही गई है, लेकिन टर्नर के अनुमान के मुताबिक इसकी वजह से करीब पौने दो करोड़ भारतीयों की मौत हुई थी. यह संख्या विश्व युद्ध में मारे गए लोगों से भी ज्यादा थी. उस वक्त भारत ने अपनी आबादी का छह फीसदी हिस्सा इस बीमारी में खो दिया. मरने वालों में ज्यादातर महिलाएं थीं. ऐसा माना जाता है कि इस महामारी से दुनिया की एक तिहाई आबादी प्रभावित हुई थी और करीब पांच से दस करोड़ लोगों की मौत हो गई थी.

बड़ी आबादी के कारण बॉम्बे में संक्रमण फैलने के कारण तेजी से फ्लू का प्रकोप बढ़ता चला गया. देश में जुलाई, 1918 में हर दिन करीब 230 लोग स्पेनिश फ्लू से मर रहे थे. द टाइम्स ऑफ इंडिया ने तब लिखा था कि बॉम्बे में करीब हर घर में किसी न किसी को बुखार की शिकायत है. इसका सबसे अच्छा उपचार है कि चिंता न करें और घर में रहकर आराम करें. तब अखबार ने लोगों को सलाह दी थी कि वे दफ्तरों और फैक्ट्रियों से दूर अपने-अपने घरों में रहें. इसके अलावा मेला, त्योहार, थिएटर, स्कूल, सिनेमा घर, रेलवे प्लेटफॉर्म जैसी भीड़-भाड़ वाली जगहों पर जाने से बचें. लोगों को हवादार घर में सोने, पोषक खाना खाने और कसरत करने की सलाह भी दी गई.

भारत में स्पेनिश फ्लू के फैलने को लेकर ब्रिटिश अधिकारियों की राय अलग-अलग थी. हेल्थ इंस्पेक्टर टर्नर मानते थे कि बॉम्बे के बंदरगाह पर बाहर से आए जहाज ने यह बीमारी भारत में फैलाई थी. वहीं, सरकार का मानना था कि यह फ्लू शहर में बाहर से नहीं आया था, बल्कि यहीं फैला था. अस्पतालों के सफाईकर्मियों को इलाज करा रहे ब्रिटिश सैनिकों से दूर रखा गया था. ब्रिटिश अधिकारियों को स्थानीय लोगों के स्वास्थ्य की अनदेखी करने की कीमत चुकानी पड़ी थी.

(संकलित) ❑

गंगा में कारखानों के प्रदूषण का कारण भ्रष्टाचार–मार्क टली

भारत में बीबीसी के पर्याय मार्क टली ने गंगा नदी में प्रदूषण, फ़ेक न्यूज़ और गरीब मज़दूर वर्ग के प्रति सरकार एवं भारतीय रेल के तौर तरीक़ों पर चिंता प्रकट की है. उनका कहना है कि धनी और माध्यम वर्गीय समाज में गरीब मज़दूरों के प्रति हमदर्दी में कमी है.लोग क़ानून का पालन नहीं करते हैं. मार्क टली ने बातें बीबीसी में अपने पुराने सहयोगी राम दत्त त्रिपाठी के साथ लम्बी और अनौपचारिक बातचीत में कहीं. चौरासी वर्ष के मार्क टली ऐसे बिरले पत्रकार हैं, जिन्हें भारत और ब्रिटेन दोनों सरकारों ने पत्रकारिता में उत्कृष्ट सेवा के लिए सम्मानित किया है. वह लगभग पचपन सालों से भारत में हैं. वे दक्षिण एशिया में लंबे समय तक बीबीसी की पहचान रहे. उन्होंने कई पुस्तकें लिखीं और अब स्वतंत्र पत्रकार के रूप में कभी- कभी लिखते हैं. मार्क ने स्वतंत्र और निष्पक्ष पत्रकारिता से कभी समझौता नहीं किया। **-सं.**

मार्क टली कहते हैं कि 'देश में फेक न्यूज जिस तेजी से चल रही है और उस पर कोई रोक नहीं लग रही है, वह बहुत ही चिंताजनक है। पिछले दिनों तब्लीगी मरकज को लेकर जिस तरह नकारात्मक खबरें चलाई गईं और इसके जरिए उत्तर प्रदेश के एक विधायक ने हिंदू मुस्लिम के बीच नफरत फैलाने की कोशिश की, वह बहुत ही गलत है।'

रामदत्त त्रिपाठी ने मार्क टली से इंटरनेट पर उनके नाम से जारी उन लेखों के बारे में पूछा, जिसमें दावा किया गया है कि मार्क टली ने अपने लेखों में मोदी सरकार की तारीफ की है और कहा हैं कि मोदी सरकार बहुत अच्छा काम कर रही है। इस पर मार्क टली कहते हैं 'नहीं..नहीं..नहीं.. मैं वह डिस्पैच कभी नहीं लिखता। मैंने कोशिश की थी, मैंने लीगल लेटर भी भेजा था गूगल को, मैंने सब कुछ किया लेकिन सफलता नहीं मिली।

अपने नाम पर फेक न्यूज चलाने के सवाल पर मार्क टली हंसते हुए कहते हैं कि 'फेक न्यूज तो बहुत चल रहा है। जितने जोर से फेक न्यूज के खिलाफ अभियान चल रहा है, उतने ही जोर से फेक न्यूज चल रहा है, उसमें कोई रुकावट नहीं हुई अभी तक।

मीडिया से लोगों की बढ़ती नाराजगी के सवाल पर मार्क टली कहते हैं कि 'मेरा ख्याल हैं कि कुछ टीवी चैनल है, सब नहीं है, जो बिल्कुल सरकार के हाथ में हैं और लोग उसमें भरोसा नहीं रख सकते हैं।

मार्क कहते हैं कि कोरोना के चलते हुए लॉकडाउन में दिल्ली की हवा पूरी तरह साफ हो गई है। वह कहते हैं कि 'मौसम साफ हो गया, हवा साफ हो गयी, और मैंने सुना कि गंगा और जमुना नदी में पानी साफ हो गया है। इसका मतलब ये है कि जो कारखाने गंगा के

किनारे पर हैं, वे गंदा पानी डालते हैं गंगा में, इसलिए सरकार को सिर्फ एक कार्रवाई करना चाहिए कि वह सब कारखाने बंद कर दे और उनको तब खुलने दे, जब उनसे पॉल्यूशन फीड बंद हो जाये।'

वे आगे कहते हैं कि 'कानपुर प्रदूषण के लिए एक हॉटस्पॉट है. दिक्कत यह है कि सारे हिंदुस्तान में सरकार कानून पास करती है, आदेश देती है लेकिन कोई पालन नहीं करता है। जो लोग जिम्मेदार हैं, वे सब भ्रष्ट हैं, यही दिखाता है कि हिंदुस्तान में भ्रष्टाचार की जड़ें कितनी गहरी हैं।'

करीब पांच दशक तक दक्षिण एशिया से लेकर भारत में हर बड़ी घटना के कवर करने वाले और उसके साक्षी रहे मार्क टली वर्तमान में मजबूर मजदूरों के पलायन करने और उनके लगातार हादसे के शिकार होने से व्यथित नजर आते हैं। वह इसे सरकार और समाज की नाकामी बताते हुए कहते हैं कि इससे पता चलता है कि देश की सरकार और पैसे वाले लोगों की गरीबों के प्रति कोई हमदर्दी नहीं है। वह कहते हैं कि उन्होंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के भाषण को भी सुना लेकिन उसमें भी मजदूरों के प्रति कोई हमदर्दी नजर नही आई।

वह कहते हैं कि उत्तर प्रदेश सरकार शहरों से वापस घर जा रहे मजदूरों को लेकर नाकाम नजर आती है। संकट के समय सरकार ने मदद करने की जगह अचानक से बिना बातचीत, मजदूरों की सुरक्षा के लिए बने श्रम क़ानून और नियम बदल दिए।

उन्होंने श्रामिकों के लिए रेलवे के बंदोबस्त को भी ख़राब बताया. मार्क ने बताया कि उन्होंने भारतीय रेल में बहुत सफ़र किया है और उसे बहुत पसंद करते थे. मार्क ने रेलवे पर डाक्यूमेंट्री भी बनायी है.

-मीडिया स्वराज

लोकतंत्र महज व्यवस्था नहीं, संस्कृति भी है

❑ अरविन्द अंजुम

भारत समेत दुनिया में दर्जनों मुल्क हैं, जिन्होंने लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपना लिया है। वहां समय-समय पर चुनाव होते हैं, जनता वोट देती है और एक चुनी हुई सरकार वहां का शासन संचालन करती है। परंतु इनमें से बहुत से देश ऐसे हैं, जहां औपचारिक ढांचा तो लोकतांत्रिक है पर समाज की संस्कृति लोकतंत्र के अनुकूल नहीं है। परिवारों, धार्मिक संस्थाओं, जातिगत संगठनों तथा यहां तक कि राजनैतिक दलों की संरचना व कार्यपद्धति लोकतांत्रिक भागीदारी वाली नहीं है। इसलिए एक हद तक इन देशों का लोकतंत्र दिखावटी एवं बनावटी बनकर रह गया है। लेकिन कई देश हैं, जहां लोकतंत्र, व्यवस्था एवं संस्कृति दोनों स्तर पर जीवंत है।

कोरोना काल के दरम्यान न्यूजीलैंड की एक घटना अत्यंत दिलचस्प है, खासतौर पर भारतवासियों के लिए। न्यूजीलैंड की प्रधानमंत्री जेसिंदा अर्डर्न अपने पार्टनर क्लार्क सेफोर्ड के साथ बेलिंगटन के मशहूर रेस्तरां ओलिव में कॉफी पीने के लिए पहुंची थीं। रेस्तरां पूरी तरह से भरा हुआ था। कोविड-19 के संक्रमण से बचने के लिए 'शारीरिक दूरी' के नियम की सख्ती के चलते उन्होंने कोई टेबल भी बुक नहीं कराया था। अतः मैनेजर ने प्रधानमंत्री को रेस्तरां में प्रवेश करने से मना कर दिया। जेसिंदा अपने पार्टनर के साथ रेस्तरां के बाहर 45 मिनट तक इंतजार करती रहीं। जब जगह मिली तो मैनेजर उन्हें बुलाकर अंदर ले गया।

क्या हम भारत में इस प्रकार की घटना की कल्पना कर सकते हैं? क्या यहां किसी होटल के मैनेजर में किसी दल के प्रखंड स्तर के लीडर या पंचायत के प्रधान या मुखिया को भी रोक देने की हिम्मत है? शायद मुझे जवाब देने की जरूरत नहीं है। बस एक निजी अनुभव साझा कर देना उचित होगा।

आज से लगभग 15-16 साल पहले संघर्ष वाहिनी के साथी एक बैठक के सिलसिले में उन्नाव गये थे। जब सुबह 10 बजे के करीब हम लोग चाय पीने नुक्कड़ पर गये तो देखा कि वहां कई लोग बंदूकें लेकर घूम रहे हैं। हमने उत्सुकतावश पूछा कि यहां कोई वारदात हुई क्या? दुकानदार ने पूरी सहजता से जवाब दिया कि नहीं। पूछने पर आगे बताया कि बगल के

कॉलेज में आज दीक्षांत समारोह है। दबंग छात्र अपने साथ आभूषण के तौर पर गन लेकर आये हैं और यहां यह आम प्रचलन है। तो इस तरह हमारे यहां के गण व गन में ऐसी अद्भुत एका है।

वैश्विक महामारी कोरोना दौर का एक और दृष्टांत बेल्जियम का है, जहां 10 हजार से भी ज्यादा लोग मौत के शिकार हो चुके हैं। बेल्जियम की प्रधानमंत्री सोफी विल्मेस स्वास्थ्य व्यवस्थाओं का जायजा लेने के लिए ब्रसेल्स के सेंट पीटर्स हॉस्पिटल पहुंची तो वहां एक अजीबोगरीब वाकया हुआ। वहां कार्यरत सभी चिकित्सकों एवं स्वास्थ्यकर्मियों ने अपना मुंह फेर लिया और प्रधानमंत्री की ओर देखा तक नहीं। वे सभी कॉरीडोर में सोफी विल्मेस की ओर पीठ करके खड़े हो गये। न कोई उत्तेजना, न कोई नारेबाजी। बस शांतिपूर्ण विक्षोभ का मर्मान्तक प्रदर्शन। अस्पतालकर्मी इस बात से अत्यन्त नाराज थे कि वहां पर्याप्त पीपीई किट तथा अन्य सुरक्षा उपकरण उपलब्ध नहीं है और कम वेतन, कम बजट एवं कम प्रशिक्षित नर्सों की भर्ती की जा रही है।

आंध्र प्रदेश में सरकारी अस्पताल के एक डॉक्टर के. सुधाकर ने इन्हीं सवालों को उठाया था और एक वीडियो भी जारी किया था। तत्काल इस डॉक्टर को निलंबित कर दिया गया। बात इतने पर भी रुकी नहीं। उन्हें पुलिस ने हाथ बांधकर सड़कों पर घसीटा और मानसिक असंतुलन का शिकार बताकर उनको पागलखाने में भर्ती करा दिया। भारत में अन्य अस्पतालों के स्वास्थ्यकर्मियों को भी सुरक्षा उपकरणों के बारे में बोलने पर सजा दी जा रही है, निलंबन और प्रताड़ना के रूप में।

एक तरफ तो इन कोरोना योद्धाओं के लिए हम बाल्कनी में खड़े होकर ताली, थाली और दिया-बाती कर रहे हैं, वहीं दूसरी ओर उन्हें कोरोनावाहक मानकर उनसे परहेज कर रहे हैं, उन्हें प्रताड़ित कर रहे हैं। यह है हमारे देश का सांस्कृतिक पाखंड। हम वसुधैव कुटुम्बकम से लेकर विश्वगुरु होने तक का दावा करने में नहीं हिचकते, पर इस संकट के समय में जो उदाहरण पेश कर रहे हैं, वे अत्यंत दुःखद एवं निराशाजनक है। जिन देशों ने लोकतंत्र की व्यवस्था के साथ अनुकूल संस्कृति गढ़ने का उद्यम किया है, वही अनुकरणीय है। हम कोरोना काल में बहुत कुछ सीख सकते हैं, बशर्ते हम सीखना चाहें—अहंकार मुक्त होकर। ❑

लोकसेवकों के नाम अध्यक्ष का पत्र

आदरणीय बहनों/भाइयों।

सादर जयजगत।

हम सोच रहे थे कि एक जून से तालाबंदी समाप्त हो जायेगी और हमलोग एक सामान्य स्थिति की ओर लौटने लगेंगे। पर ऐसा हुआ नहीं तथा लॉकडाउन-5 शुरू हो गया। महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु सरकार ने तो लॉकडाउन की अवधि 30 जून तक बढ़ा दी है।

हमें इस बात पर आश्चर्य होता है कि केन्द्र और राज्य सरकारों ने शराब, गुटखा और पान मसाले की दुकानों को खोलने की छूट दे दी है। इसमें बिना किसी उचित दूरी के हजारों की संख्या में लोग लाइनों में खड़े रहकर शराब आदि खरीद रहे हैं। दूसरी ओर कुछ सरकारों ने धार्मिक कार्यक्रमों पर से प्रतिबंध हटा लिया है। लेकिन सभी सरकारों ने सामाजिक कार्यक्रमों पर प्रतिबंध जारी रखा है। इन सरकारों को जनता के संगठित और जागृत होने से खतरा महसूस होता है। इसलिए उन्होंने कोरोना के नाम पर सारी सामाजिक गतिविधियों को रोक रखा है। यह किसी भी लोकतांत्रिक देश के लिए शुभ लक्षण नहीं है।

इन परिस्थितियों के कारण सर्व सेवा संघ का अधिवेशन भी नहीं हो पा रहा है और सारा काम ठप पड़ा है। हम आशा करते हैं कि 30 जून के बाद तालाबंदी का यह दौर समाप्त होगा और सामाजिक गतिविधियों को शुरू करने की अनुमति प्रदान की जायेगी। ऐसा होते ही शीघ्र से शीघ्र अधिवेशन की नई तारीख निर्धारित करके इसकी जानकारी आपको दी जायेगी।

आप सबकी कुशलता और स्वास्थ्य के शुभकामनाओं के साथ! **-महादेव विद्रोही,**

अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

कोरोना वायरस से जंग होमियोपैथी के संग

❑ **डॉ. विश्वनाथ आजाद**

होमियोपैथी चिकित्साशास्त्र विष से विष का शमन करता है।शरीर में जिस लवण या रसायन की कमी हो जाती है, वही लक्षणों के आधार पर शारीरिक क्षमता को देखते हुए उचित पोटेंसी और मात्रा में दी जाती है। होमियोपैथी चिकित्सा पद्धति लक्षणों को दबाती नहीं है, बल्कि शरीर को उन्हीं लक्षणों वाली दवा खिला कर उक्त लक्षण से लड़ने के लिए शरीर की जीवनी शक्ति को बढ़ा कर स्वास्थ्य लाभ पहुंचाती है। चूंकि यह लाक्षणिक चिकित्सा पद्धति है, इसलिए व्यक्ति-व्यक्ति के विभिन्न लक्षणों के आधार पर अलग अलग दवाएं दी जाती हैं। दवाओं का निर्माण अमेरिकन फार्मोकोपिया के सिद्धांत पर होता है। दवा का काम है व्यक्ति विशेष में उपस्थित लक्षणों को दूर कर स्वास्थ्य प्रदान करना। मानव हीं नहीं, पशु पक्षियों पर भी होमियोपैथिक दवा कारगर साबित हुई है। बशर्ते उसका उपयोग समय पर किया जाये।

आज विश्व के अधिकांश देशों में यह वायरस अपने पांव फ़ैला चुका है। एक भय का वातावरण बना हुआ है। लेकिन हम गौर करें तो पाएंगे कि मरीजों के निरोगी होने का प्रतिशत मृतकों के प्रतिशत से ज्यादा है। ऐसा तब है, जबकि अब तक किसी वैक्सीन का सफल अनुसंधान नहीं किया जा सका है। ऐसे में

कोरोना वायरस की जानकारी ज्यों ही विश्व स्वास्थ संगठन द्वारा दी गई, भारत सरकार के आयुष मंत्रालय ने एक सूचना जारी किया कि होमियोपैथ की दवा अर्सेनिक एल्बम 30 पोटेंसी इस वायरस से बचाव में कारगर साबित होगी। कोरोना वायरस से बचाव के लिए इस दवा की दो बूंदें तीन दिन सुबह खाली पेट जीभ पर लेना है। पहले भी चेचक, कालाजार और हैजा जैसी बीमारियों में होमियोपैथिक दवाओं का उपयोग कारगर साबित हुआ है।

कोरोना से बचाव के लिए आर्सेनिक एल्बम 30 के अलावा निम्न दवाओं का उपयोग लक्षणों के अनुसार किया जा सकता है। जैसे सर्दी जुखाम, शरीर में हड्डीतोड़ बुखार और दर्द आदि हो तो निम्नलिखित दवाओं का उपयोग स्वास्थकर होगा।

1.इंफ्लएंजिनम 1एम-दो बूंदें सात दिन में एक बार सुबह खाली पेट, 2.एलियम सेपा-30, 3. एकोनाइट नैप-30, 4. इयुपटोरियम पर्फोलियटम-30, 5. जेलसिमियम -30, 6. रस टक्स -30।

दो से छह तक की सभी दवाओं की 20 एम.एल. मात्रा 100 एम.एल. की एक शीशी में मिला कर रख लें। एक 30 एम.एल. की शीशी में 30 गोली डाल कर उक्त मिश्रित दवा में से 50 से 55 बूंदे मिलाकर रख लें। उपरोक्त लक्षणों के रहने पर 5-6 गोलियां या सीधे दो बूंदें जीभ पर लेना है। बुखार हो तो बुखार छूटने के पहले एक एक घंटे पर और बुखार छूटने के बाद तीन तीन घंटे पर चार बार लेने से सभी प्रकार के लक्षणों से मुक्त होकर स्वास्थ लाभ मिलेगा। इस तरह हम स्वयं भी सुरक्षित रहेंगे और अपने आस पास भी लोगों को सुरक्षित रहने में मददगार साबित होंगे। ❑

बिहार की गिरमिटिया मजदूरिनें और जॉर्ज ग्रियर्सन

❑ पीटी यादवेन्द्र

स्वाधीन भारत के इस कोरोना काल में मजदूरों की जो दुर्दशा हो रही है, वह अमानवीय तो है ही, औपनिवेशिक काल में अंग्रेजों द्वारा कुली के रूप में हिन्दुस्तानियों, ख़ासकर बिहार और पूर्वी उत्तर-प्रदेश के मजदूरों की भर्ती और अप्रवास की भी याद दिलाती है. फरवरी 1883 में प्रख्यात भाषा शास्त्री के तौर पर विख्यात सर जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने बंगाल सरकार को 'रिपोर्ट ऑन कोलोनियल इमीग्रेशन फ्रॉम द बंगाल प्रेसिडेंसी' शीर्षक से एक विस्तृत रिपोर्ट सौंपी. बंगाल सरकार ने 'द एमिग्रेशन एक्ट 1871' के लागू होने के बाद किस तरह से उसके प्रावधानों का पालन किया गया, क्या उनमें किसी तरह की खामी है और यदि है तो उन खामियों को कैसे दुरुस्त किया जा सकता है, इन तीन प्रमुख बिंदुओं पर अध्ययन करने के लिए जॉर्ज ग्रियर्सन को कहा था. बंगाल प्रेसीडेंसी के अधिकार क्षेत्र में आने वाले गिरमिटिया मजदूर भर्ती करने वाले प्रमुख शहरों का व्यापक दौरा करके उन्होंने सरकारी दस्तावेज खंगाले और संबंधित अफसरों, एजेंटों और बाहर भेजे गए लोगों के परिजनों से बातचीत की. इन्हीं विषयों पर उपलब्ध विस्तृत जानकारी उन्होंने अपनी रिपोर्ट में संकलित की. इसका हिन्दी में अनुवाद पीटी यादवेन्द्र ने किया है। **- सं.**

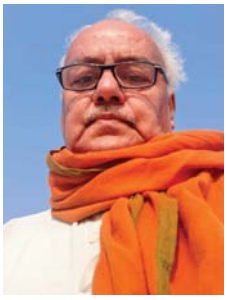

इस रिपोर्ट में ग्रियर्सन स्पष्ट तौर पर कहते हैं कि मैं यह मान कर अपनी यह रिपोर्ट तैयार कर रहा हूँ कि सरकार बिहार से अधिकाधिक संख्या में मजदूरों को प्रवास के लिए भर्ती करने की इच्छुक है, पर इसके लिए वह अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले कानूनी रास्तों का ही सहारा लेगी. तत्कालीन परिस्थितियों में ब्रिटिश उपनिवेश में भारत का लेबर मार्केट में दबदबा था और अंग्रेज जब चाहते, तब उनकी आपूर्ति को नियंत्रित कर अपना दबदबा कायम रखते. इसका दूसरा पहलू बहुत दिलचस्प है, जिसमें ग्रियर्सन कहते हैं कि हालांकि मजदूरों की माँग पूरी करने में चीन भारत से आगे है लेकिन चीनी मजदूरों और भारतीय मजदूरों के बीच एक बड़ा अंतर यह है कि जहाँ चीनी मजदूर अपने लिए पर्याप्त पैसा इकट्ठा करने के बाद स्वतंत्र हो जाना चाहते हैं और अपने पूर्व मालिकों के समकक्ष स्थापित होना चाहते हैं, वहीं भारतीय मजदूरों की महत्वाकांक्षाएँ बड़ी सीमित होती हैं, उनकी ख्वाहिश बेहतर पगार पाने वाले कुली बने रहने भर की होती है, इससे ज्यादा की उन्हें दरकार नहीं होती. यही कारण है कि इन उपनिवेशों में भारतीय मजदूर ज्यादा लोकप्रिय हैं.

1881 - 82 में करीब 1800 मजदूर बंगाल प्रेसीडेंसी से दुनिया के विभिन्न देशों में गिरमिटिया प्रणाली के अंतर्गत भेजे गए, जिसमें से 90% से ज्यादा बिहार के पटना, शाहाबाद और सारण जिलों से भेजे गए. इनके अलावा गया, दरभंगा, मुजफ्फरपुर और चंपारण जिलों से भर्ती किए गए. अंग्रेज़ अपने जिन उपनिवेशों में मजदूर ले जाने के लिए उत्सुक थे, उनमें मॉरिशस, गयाना और ट्रिनिडाड अग्रणी थे.

प्रवास के मुद्दे पर ग्रियर्सन अपने विचार स्पष्ट शब्दों में कहते हैं। वे एक पढ़े लिखे, समझदार स्थानीय नागरिक के एक प्रतिवेदन का हवाला देते हैं, जिसमें कहा गया है कि गिरमिटिया प्रणाली के अंतर्गत बहुत बड़े पैमाने पर अत्याचार और भ्रष्टाचार किया जाता है. ऐसी घटनाएँ बहुत आम हैं कि भर्ती करने वाले एजेंट और उनके कारिंदे गरीब परिवारों की बहू-बेटियों को और कई बार सम्मानित परिवारों की स्त्रियों को भी, बहला-फुसलाकर अपने चंगुल में फाँस लेते हैं और उन्हें कभी भी साफ-साफ शब्दों में यह नहीं बताते कि विदेश ले जाकर उनसे क्या काम कराया जाएगा. हर तरह के प्रलोभन देकर उन्हें पहले अपने परिवारों से दूर और घरों से बाहर किया जाता है. कभी-कभी किसी दूसरी जगह रख कर डिपो ले जाया जाता है और तब खुलासा किया जाता है कि उन्हें किस देश ले जाया जाने वाला है. एक बार घर छोड़ कर बाहर कदम रख देने के बाद सम्मान सहित परिवारों में लौटना उन महिलाओं के लिए संभव नहीं रह जाता. एकबार हमेशा-हमेशा के लिए घर का रास्ता बंद हो जाने के बाद उन स्त्रियों के पास एजेंट का ठिकाना छोड़कर कहीं और जाने का कोई रास्ता नहीं बचता। थोड़े बहुत विरोध के बाद दो-चार दिनों में वे इसे अपनी नियति मानकर हथियार डाल देती हैं.

ग्रियर्सन ने विस्तृत पड़ताल के बाद अपनी रिपोर्ट में प्रवास पर जाने की इच्छुक महिलाओं को चार वर्गों में विभाजित किया है।

1. उन मजदूरों की पत्नियाँ, जो पहले प्रवास में रह चुके हैं और अब अपनी पत्नियों को लेकर जाना चाहते हैं, पर प्रवास में रह रहे मजदूरों की पत्नियों की संख्या बहुत मामूली थी.

2. ऐसी विधवा स्त्रियाँ, जिनकी देखरेख करने वाला कोई सगा संबंधी नहीं है। विधवाओं के बारे में ग्रियर्सन का कहना था कि वे लांछन मुक्त थीं और कोई भी देश उनको लेने में आनाकानी नहीं करता था, पर उनके साथ मुश्किल यह थी कि वे अपना देश छोड़ने को आसानी से राजी नहीं होती थीं.

3. विवाहित स्त्रियाँ, जो अपने घरों से निकल गईं। या तो उनके पतियों और परिवारों ने उन्हें त्याग दिया या इतर कारणों से वे अपने पतियों के बंधन से मुक्त होना चाहती हैं.

4. वे वेश्याएँ, जिनको अपने देश में आने की इजाजत कानूनी रूप में देने के लिए कोई देश, कोई समाज खुले तौर पर तैयार नहीं होता.

ग्रियर्सन ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि अंग्रेज हुकूमत वाले उपनिवेशों में महिलाओं को आमंत्रित करने के लिए सबसे बड़ी उम्मीद चौथी श्रेणी की महिलाओं पर ही टिकी हुई थी। वे बहुत आसानी से अपना घर बार छोड़कर नए परिवेश में जा बसने को तैयार रहती थी। 1883 की ग्रियर्सन की रिपोर्ट में यह दर्ज है कि बांकीपुर, पटना और शाहाबाद के बाद सोनपुर मेला बाहर भेजे जाने वाले कुलियों की बहाली के लिए सबसे मुफीद जगह थी.

ग्रियर्सन अपने दौरे में जब मुजफ्फरपुर पहुँचे तो उन्होंने कागजातों की जाँच के बाद

एक बहुत दिलचस्प तथ्य की तरफ इशारा किया। उन्होंने पाया कि वहाँ 1880 तक बाहर जाने के लिए जितनी भी भर्ती हुई, वह सारी की सारी महिलाओं की हुई, एक भी पुरुष इनमें शामिल नहीं था. इसको थोड़ा सा और विस्तार दिया तो मालूम हुआ कि जुलाई 1877 से नवंबर 1880 के बीच मुजफ्फरपुर से 51 व्यक्तियों की भर्ती हुई, जिनमें से 22 पुरुष थे- और इन सब की भर्ती 1880 में ही की गई. अगले तीन सालों में भर्ती लगभग ठप रही.

रिकॉर्ड देखने के बाद ग्रियर्सन ने खुद मौके पर जाकर बाहर जाने के लिए भर्ती होने वाली कई महिलाओं के पते ठिकाने ढूँढ़ने की कोशिश की. रिपोर्ट में शामिल अपनी डायरी में उन्होंने लिखा है कि उनमें से ज्यादातर महिलाएँ मुजफ्फरपुर शहर की ही थीं और लोगों को उनके बारे में मालूम था. वे सभी औरतें ऐसी वेश्याएँ थीं, जिनका धंधा कोई ख़ास चल नहीं रहा था, इसीलिए उन्होंने बाहर जाकर नया विकल्प ढूँढ़ने का फैसला किया। वहाँ उनके कोई नाते रिश्तेदार नहीं थे और न ही ऐसा कोई था जो उनकी खोज खबर लेता. पहले उनके बारे में जानने वालों को यह भी नहीं मालूम था कि वे अब क्या कर रही हैं, जिंदा भी हैं या मर गईं.

अपनी रिपोर्ट में ग्रियर्सन 1874 की बेतिया की एक घटना का उल्लेख करते हैं, जिसमें त्रिनिडाड के लिए भर्ती करने वाले एजेंट ने बेतिया शहर की एक ईसाई महिला और उसके बच्चों को गलत तरीके से झूठ बोलकर, दबाव डालकर भर्ती किया था. इसकी शिकायत होने पर काफी बवाल हुआ, पिटाई के डर से वह एजेंट तो फरार हो गया पर उसके बाद वहाँ दूसरे एजेंट के लिए काम करना असंभव हो गया. दुर्भाग्य से बेतिया की उस महिला को भर्ती करने वाली एजेंट खुद भी एक महिला थी.

रिपोर्ट के अंत में जॉर्ज ग्रियर्सन ने जो सुझाव दिए हैं, वे गिरमिटिया प्रणाली को मजबूत बनाने को ध्यान में रख कर दिए गए हैं पर साथ-साथ सरकार का माननीय चेहरा दिखाने की भी कोशिश की गई है. आगे वे इस उपनिवेशी प्रणाली को और मजबूत बनाने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव भी देते हैं। स्पष्ट है कि वे गिरमिटिया प्रणाली को बनाये रखने के पक्ष में खड़े दीखते हैं. ❑

कुटीर व ग्रामोद्योगों से ग्राम विकास संभव

❑ **शशि त्यागी / अशोक चौधरी**

कोरोना महामारी ने हमें सामाजिक, आर्थिक और स्वास्थ्य जैसे कई मोर्चों पर प्रभावित किया हैं। महानगरों में काम करने वाले मजदूर परिवार सहित वापस अपने गांवों को लौट रहे हैं। जबकि रोजगार के नजरिए से देखा जाए तो गांवों में मौसमी बेरोजगारी जैसी समस्याएं पहले से ही हैं। ऐसी स्थिति में ग्राम स्तर पर रोजगार के वृहद अवसर पैदा करना बड़ी चुनौती है। गांधी द्वारा बताए ग्रामोद्योगों में इसका स्पष्ट समाधान हमें मिलता हैं। हमारे गांव स्वावलंबी बनें, ताकि बड़ी चुनौतियों का सामना हम सक्षमता से कर पाएं। इसे निम्न बिंदुओं के द्वारा समझा जा सकता हैं।

1. मनरेगा- मनरेगा के माध्यम से सरकार गांवों में पारंपरिक जल स्त्रोत जैसे तालाब, जोहड़, कुओं, बावड़ियों इत्यादि की सफाई व मरम्मत कराए। ओरण, गोचर भूमियों की मेड़बंदी कराये तथा गांवों में सार्वजनिक खड़ीन बनवाए। इससे पेयजल, वर्षाजल संचय, भूजल स्तर में वृद्धि सहित अन्य लाभ भी होंगे। वापस गांव लौट रहे लोगों के लिए घरों का निर्माण मनरेगा के माध्यम से हो। इसमें प्रति व्यक्ति को वर्ष में 100 दिन से अधिक रोजगार देने का प्रावधान किया जाए।

2. स्थानीय उत्पादों का मूल्य संवर्द्धन- हर क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों में वहां के वृक्षों, वनस्पतियों से जो वस्तुएं मिलती हैं, उसके मूल्य संवर्द्धन का प्रशिक्षण ग्रामीणों को दिया जाए, जिससे उत्पाद की गुणवत्ता, भंडारण क्षमता और मूल्य में वृद्धि हो। राजस्थान में कैर, कुमट, सांगरी, काचर, महुआ इत्यादि बहुतायत में होते हैं। इसके सीजन में किसान इन्हें स्थानीय बाजार में कम दाम में बेचने को मजबूर होते हैं, क्योंकि उनके पास भंडारण क्षमता नहीं होती है। इसलिए उन्हें प्रशिक्षण देकर वस्तु संरक्षण एवं मूल्य संवर्द्धन तकनीक सिखाई जाए।

3. दैनिक आवश्यकता की वस्तुएं- घरों में महिलाएं मसाले, पापड़, अचार, साबुन, सूखी सब्जियां, स्थानीय फसलों जैसे बाजरा से ओट्स, बिस्किट इत्यादि बनायें। अभी गेहूं से काफी लोगों को एलर्जी की शिकायत हो रही है। उनके लिए बाजरे के बिस्किट जैसे उत्पाद उपयुक्त विकल्प हो सकते हैं। किसान और पशुपालक परिवार, पनीर तथा घी बनाएं। इसका प्रशिक्षण भी यदि दिया जाए तो बेहतर परिणाम मिलेंगे। इन तकनीकों से न केवल स्वदेशी को बढ़ावा मिलेगा, बल्कि स्वास्थ्य, पोषण के स्तर पर भी लाभ होगा।

4. खान मजदूर- इस समय सबसे बड़ा खतरा इन्हीं पर हैं। सिलिकोसिस जैसी बड़ी बीमारी से ये पहले ही जूझ रहे हैं। शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता कम होती है। अभी कुछ जगह खनन कार्य शुरू हो चुके हैं। जहां ये मजदूर रहते हैं, वहां फिजिकल डिस्टेंसिग का पालन नहीं हो पाता, इस पर ध्यान देने की जरूरत है।

5. वृक्षारोपण- इस मानसून सत्र में स्थानीय वृक्ष प्रजातियों के वृक्ष अधिकाधिक लगाए जाएं। जैसे राजस्थान में कुमट, खेजड़ी, कैर, बैर, जाल इत्यादि, जिससे आने वाले समय में स्थानीय लोगों को खाद्य वस्तुएं, पशुओं के लिए चारा, औषधीय उत्पाद भी प्राप्त होंगे व वन्य-जीवों को भी आश्रय मिलेगा।

कोरोना हमारे लिए बड़ा संकट लेकर आया हैं। हमें सामाजिक, आर्थिक और स्वास्थ्य सहित विभिन्न मोर्चों पर उसका सामना करना है। उपरोक्त उपायों से हमारे गांवों और कमज़ोर लोगों को कई लाभ मिलेंगे। गांधी के 18 रचनात्मक कार्यक्रम आज भी बहुत प्रासंगिक है। इन पर जितना अधिक काम हम करेंगे, उतना ही लाभ हमें होगा और पलायन जैसी समस्याओं का सामना हम कर पाएंगे। नयी तालीम शिक्षा को भी महत्व दिया जाए, जिससे विधार्थी जीवन के बुनियादी कार्य व मूल्य सीख सकें। ❑

भूल सुधार

सर्वोदय जगत के पिछले अंक (16-31 मई 2020) में पृष्ठ संख्या 5 पर डॉ. यान लियांके के आलेख 'जब झूठ से सामना होगा तो स्मृतियां सवाल पूछेंगी' के साथ प्रकाशित संपादकीय टिप्पणी में आलेख के अनुवादक का नाम सही नहीं छपा है। कृपया सीटी यादवेन्द्र के स्थान पर पीटी यादवेन्द्र पढ़ें। इस भूल के लिए हमें खेद है। **–सं.**

सम्पूर्ण क्रांति दिवस

पांच जून को क्यों याद करें!

❑ श्रीनिवास

आज से लगभग 46 वर्ष पहले, 1974 की साधारण सी लगने वाली एक घटना, एक जुलूस, एक सभा में ऐसा क्या है कि हम उसे हर वर्ष और बार बार याद करते हैं? हम, मतलब मुझ जैसे उस जुलूस में शामिल तमाम लोग, जो तब युवा थे. सच कहें तो अब थोड़ा संकोच भी होने लगा है, मानो एक नॉस्टेल्जिया की तरह हम अतीत के किसी कालखंड को भूल नहीं पा रहे हैं. चूँकि हम उस दौर, उस आंदोलन में अपनी भूमिका को लेकर गर्व का अनुभव करते हैं, इसलिए एक कर्मकांड की तरह उसे याद कर लेते हैं. हम जैसों के लिए तो यह इसलिए ख़ास है कि अपने जीवन में समग्र बदलाव के उस आन्दोलन में थोड़ा योगदान दे पाने के अलावा हम शायद ख़ास कुछ कर ही नहीं सके हैं, जिसे इस तरह याद कर सकें. लेकिन सिर्फ यही सच नहीं है. सच यह भी है कि 'पांच जून' आजाद भारत के इतिहास की भी एक खास तारीख बन चुकी है. इसलिए कि उसी दिन बिहार (अविभाजित, झारखंड सहित) के विद्यार्थियों की चंद मांगों को लेकर आक्रोशजनित जो आंदोलन 18 मार्च को शुरू हुआ था, उसने एक व्यापक और गंभीर, समाज परिवर्तन के आंदोलन का रूप ले लिया था. इसलिए कि उसी दिन पटना के गांधी मैदान में आजादी के आंदोलन के एक वृद्ध हो चले नायक ने उसे 'सम्पूर्ण क्रांति' का आंदोलन करार दिया था. इसलिए कि वह महज विधानसभा भंग करने और सरकार बदलने का नहीं, समाज और व्यवस्था बदलने का आन्दोलन बन गया था.

मुझ जैसे हजारों, लाखों युवा तो उस आंदोलन में यूं ही कूद पड़े थे. बिना यह जाने समझे कि इससे हासिल क्या होगा. बस तत्कालीन सरकार के अहंकार और दमनकारी रवैये पर गुस्सा था. हालाँकि आठ अप्रैल को ही जेपी के आंदलन के समर्थन में आ जाने और पटना में एक मौन जुलूस का नेतृत्व करने से यह लगने लगा था कि कुछ अच्छा ही होगा.

पांच जून की उस ऐतिहासिक रैली, जिसे उस समय तक की पटना के सबसे बड़ी रैली माना गया था, के सिर्फ एक प्रसंग का जिक्र करना चाहूंगा. राजभवन से रैली की वापसी के दौरान एक फ्लैट से रैली पर गोली चली. गोली चंपारण (जहाँ से मैं था) के ही विधायक फुलेना राय के फ्लैट से चली थी, इत्तफाक से हमारी टोली वहीं थी. आंदोलनकारियों में भारी उत्तेजना फ़ैल गयी. सभी उस जगह जमा होने लगे. तभी माइक से जेपी की अपील सुनाई पड़ी—आप चुपचाप शांति बनाये रखते हुए गाँधी मैदान चले आयें, और लोग शांत हो गये. यह था जेपी का असर. यदि उस समय हिंसा भड़क गयी होती, तो पता नहीं आंदोलन का स्वरूप क्या हो जाता, क्या पता उस दिन गांधी मैदान में वह सभा हो भी पाती या नहीं. बहरहाल, सभा हुई.

गांधी मैदान में जेपी, जिन्हें शायद उसी दिन उसी सभा में पहली बार 'लोकनायक' घोषित किया गया, एक शिक्षक की तरह बोलते रहे. आवाज में कोई उत्तेजना नहीं. मेरे पल्ले बहुत कुछ पड़ा भी नहीं या कहें कि उतने धैर्य से उन्हें सुन ही नहीं सका. बस इतना जान गया कि यह कोई तात्कालिक या कुछ दिनों का मामला नहीं है, इसमें लगना है तो लम्बी तैयारी के साथ लगना होगा. शायद जीवन भर.

जल्द ही वह आंदोलन देशव्यापी होने लगा. उसकी आंच केंद्र की इंदिरा गांधी सरकार तक पहुँचने लगी. लेकिन इसके साथ ही यह भी हुआ कि समाज परिवर्तन के लक्ष्य पर सरकार बदलने का तात्कालिक उद्देश्य हावी होने लगा. पांच जून को जेपी ने गांवों से जुड़ने, जनता को जागरूक करने, संगठित करने का दायित्व हमें सौंपा था, हम उस काम में ईमानदारी से नहीं लग सके.

जेपी का वह भाषण बहुप्रचारित है, जिसमें उन्होंने पहली बार सम्पूर्ण क्रान्ति का उद्घोष किया था. कहा था- 'मित्रों, आंदोलन की चार मांगें हैं- भ्रष्टाचार, मंहगाई और बेरोजगारी का निवारण हो और कुशिक्षा में परिवर्तन हो. लेकिन समाज में आमूल परिवर्तन हुए बिना क्या भ्रष्टाचार मिट जाएगा या कम हो जायेगा? मंहगाई और बेरोजगारी मिट जायेगी या कम हो जायेगी? शिक्षा में बुनियादी परिवर्तन हो जायेगा? नहीं. यह संभव नहीं है, जब तक कि सारे समाज में एक आमूल परिवर्तन न हो. इन चार मांगों के उत्तर में समाज की सारी समस्याओं का उत्तर है. यह सम्पूर्ण क्रांति है मित्रों.' फिर उन्होंने सम्पूर्ण क्रान्ति के मुख्य आयाम भी बताये- सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैचारिक, शैक्षणिक और नैतिक क्रांति. साथ में यह भी कहा कि डॉ लोहिया ने जिस सप्त क्रांति की बात कही थी, यह सम्पूर्ण क्रांति भी लगभग वही है. अब इसमें लोहिया के नर-नारी समता को जोड़ दें तो बदलाव का आयाम और स्वरूप लगभग स्पष्ट हो जाता है. जेपी बीच बीच में यह तो कहते ही थे कि क्रान्ति का कोई ब्लू प्रिंट नहीं होता, हर क्रान्ति अपना स्वरूप और तरीका खुद तय करती है. हाँ, यह निर्विवाद था और है कि जेपी की और अब हमारी कल्पना की सम्पूर्ण क्रांति शांतिमय ही होगी. बिहार आंदोलन के इस नारे में भी यह स्पष्ट है- हमला चाहे जैसा होगा, हाथ हमारा नहीं उठेगा.

आंदोलन आगे बढ़ता और फैलता गया. सरकार आंदोलन को बलपूर्वक दबाने, कमजोर करने और तोड़ने के हर संभव प्रयास करती रही. इसी क्रम में चार नवम्बर 1974 को पटना में जेपी पर लाठी तक चली. सत्ता सचमुच बौरा गयी थी. इंदिरा गांधी ने आरोप लगाया कि आंदोलन अलोकतांत्रिक है और जेपी एक निर्वाचित विधानसभा और सरकार को भंग करने की लोकतंत्र विरोधी मांग का समर्थन कर रहे हैं. जेपी ने इस चुनौती को स्वीकार कर लिया, कहा- ठीक है, हम चुनाव में ही दिखायेंगे कि जनता किसके साथ है.

जाहिर है, उसके बाद आंदोलन पर राजनीतिक रंग भी कुछ ज्यादा ही हावी हो गया. उसके बाद 12 जून 1975 को इलाहबाद हाईकोर्ट द्वारा इंदिरा गांधी के निर्वाचन को रद्द करने के फैसले के बाद तो देश का वातावरण ही बदल गया. निश्चय ही आंदोलन के दबाव और देश में फैलते उसके प्रभाव के कारण ही इंदिरा गांधी पर इस्तीफ़ा देने का ऐसा दबाव पड़ा कि उन्होंने 25 जून की रात देश में इमरजेंसी लगा दी. जेपी सहित विपक्ष के लगभग तमाम नेता गिरफ्तार हो गए. उसके बाद जो हुआ, सब इतिहास ने दर्ज है. लेकिन बाद

में हमें शिद्दत से महसूस हुआ कि यदि जेपी की इच्छा और उनके निर्देशों के अनुरूप हम गाँवों से जुड़ सके होते, तो इमरजेंसी में भी वैसी दहशत और खामोशी नहीं दिखती, जो दिखी.

1977 में केंद्र में, फिर अनेक राज्यों में सत्ता तो बदली, फिर भी बहुत कुछ नहीं बदला. कम से कम जेपी की कल्पना के अनुरूप तो नहीं ही बदला. तब से अब तक देश-दुनिया में बहुत बदलाव हो चुका है, लेकिन इसे सकारात्मक नहीं कह सकते. आज तो देश बेहद निराशाजनक दौर से गुजर रहा है. बिना घोषणा के तानाशाही के लक्षण दिखने लगे हैं. आज बहुतों को लग सकता है कि आंदोलन अंततः निष्प्रभावी और विफल साबित हुआ. लेकिन उस आंदोलन से निकली विभिन्न धाराओं ने भारतीय राजनीति की दशा दिशा को गहरे प्रभावित किया, इससे कोई इनकार नहीं कर सकता. उस आंदोलन से युवाओं की शक्ति स्थापित हुई. लोकतंत्र मजबूत हुआ. दोबारा इमरजेंसी लगने की आशंका लगभग निरस्त हुई. मानवाधिकार को मान्यता मिली. उस आंदोलन से निकले समूहों ने देश भर में जनता के सवालों को उठाने, उन्हें संगठित करने का काम जारी रखा. जल-जंगल-जमीन के सवाल को राष्ट्रीय महत्व का मुद्दा बनाया.

लेकिन इसका दूसरा पहलू यह भी है कि आज जो राजनीतिक समूह देश की सत्ता और राजनीति पर प्रभावी है, वह भी खुद को जेपी और उस आंदोलन का वारिस होने का दावा करता है. यह समूह उस आंदोलन के मूल्यों के उलट एक संकीर्ण हिंदुत्व के विचार से लैस है और येन केन प्रकारेण उसे देश पर थोपना चाहता है. लोकतंत्र के नाम पर वह असहमति और सवाल पूछने के अधिकार को नकारता है. और यदि वे इसमें सफल हो गये, तो यह उस आंदोलन की बहुत बड़ी पराजय होगी. इससे उसका नकारात्मक होना भी सिद्ध होगा. ऐसा न हो, यह दायित्व उन लोगों पर है, जो खुद को 'सम्पूर्ण क्रांति' धारा का असली वारिस मानते हैं, जो इस संकीर्णता और धर्मोन्माद की राजनीति को गलत मानते हैं, जो इस देश को विषमता और अन्याय से मुक्त करके समानता, बंधुत्व और लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित देश बनाना चाहते हैं. आज यदि हम ऐसा करने का संकल्प ले सकें, तभी 'पांच जून' को याद करना सार्थक होगा. ❑

1974 के जन आंदोलन की कुछ स्मृतियां

❑ अनिल प्रकाश

आज से 46 साल पहले 1974 में बिहार की धरती से छात्रों का एक आंदोलन शुरू हुआ था। यह थोड़े ही समय में व्यापक जन-आंदोलन में परिवर्तित होकर देश भर में फैल गया। भ्रष्टाचार, महंगाई, बेरोजगारी, कुशिक्षा के खिलाफ जो आंदोलन चला था, वह जनतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत करने और लोकतांत्रिक मूल्यों के संवर्द्धन का आंदोलन बन गया। इसके साथ ही सामाजिक-आर्थिक समानता, जातिप्रथा का उन्मूलन स्त्री-पुरुष समानता, सामाजिक रूढ़ियों और अंधविश्वासों से मुक्ति जैसे लक्ष्य इस आंदोलन में प्रखरता से मुखरित होने लगे थे।

छात्रों के आंदोलन की पृष्ठभूमि फरवरी (1974) से ही बन रही थी। पटना में आयोजित छात्र नेता सम्मेलन में इसकी रूपरेखा निर्धारित करने की शुरुआत हो गई थी। लेकिन छात्र नेताओं को भी यह अनुमान नहीं था कि छात्रों का आंदोलन विश्वविद्यालयों, कॉलेजों और शहरों से निकलकर गांव-गांव में फैल जाएगा और इसका स्वरूप देशव्यापी हो जाएगा। आंदोलन जन-जन की आवाज बनकर गूंज उठेगा और सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक व्यवस्था में मूलभूत परिरर्वतन लाने की दिशा में बढ़ जाएगा।

18 मार्च 1974 को पटना में छात्रों का प्रदर्शन हुआ। बड़ी संख्या में छात्र जुटे थे। उस दिन पटना में ऐसे असामाजिक तत्व भी सक्रिय हो गये, जिन्होंने भीषण आगजनी और तोड़-फोड़ की। यहां तक कि उस समय के प्रमुख अखबार, सर्चलाइट एवं प्रदीप के दफ्तर और प्रेस को भी जला दिया। आचार्य राममूर्ति ने हमें बताया था कि यह एक सुनियोजित षड्यंत्र था। उस समय की छात्र संघर्ष संचालन समिति के एक वरिष्ठ नेता का कहना है कि कांग्रेस के अंदरूनी झगड़े के कारण विक्षुब्ध गुट के लोगों ने उत्पात करने के लिए अच्छी संख्या में अपने लोगों को पटना भेजा था।

इस घटना के साथ ही छात्रों पर सरकार का दमन चक्र तेज हो गया था और स्थिति छात्र नेताओं के हाथ से निकल गई थी। घबराए छात्र नेता बचते-छुपते जेपी के पास पहुंचे और उनसे अनुरोध किया कि वे इस आंदोलन का नेतृत्व संभालें। जेपी ने छात्रों के सामने तीन शर्तें रखीं।

1. आंदोलन शांतिमय रहेगा, आंदोलन का स्वरूप निर्दलीय रहेगा।

2. छात्र संघर्ष संचालन समिति के छात्र नेता अपने-अपने दलीय छात्र संगठन से अलग हो जाएं।

3. आंदोलन के फैसलों के संबंध में छात्र नेता राय देंगे, लेकिन अंतिम निर्णय जेपी का होगा।

जेपी जानते थे कि अगर छात्र नेता अलग-अलग दलों से निर्देशित होते रहेंगे तो आंदोलन में खींचतान चलती रहेगी। वे यह भी जानते थे कि अलग-अलग धाराओं से आए छात्र नेताओं में मतैक्य स्थापित करने के लिए उन्हें निर्णायक भूमिका में आना पड़ेगा। छात्र नेताओं ने जेपी द्वारा रखी सभी शर्तें मान ली और जेपी ने आंदोलन का नेतृत्व करना स्वीकार कर लिया। जयप्रकाश नारायण ने जैसे ही आंदोलन का नेतृत्व संभाला, आंदोलन में एक नई जान आ गई।

दरअसल वर्ष 1972 से ही जेपी छात्रों के बीच घूम रहे थे। बांग्लादेश में खुद बंगबंधु मुजीबुर्ररहमान द्वारा बांग्लादेश के मुक्ति के एक वर्ष बाद ही लोकतंत्र को समाप्त कर देने की घटना उन्हें उद्वेलित कर रही थी। भारत में भी सत्ता पक्ष की ओर से सीमित तानाशाही लागू करने की बात शुरू हो चुकी थी। लोकतंत्र पर आसन्न खतरों को देखते हुए उन्होंने 'यूथ फॉर डेमोक्रेसी' की अपील की थी। वह छात्रों से आगे आने की अपेक्षा कर रहे थे। वे यह भी मानते थे कि सामाजिक, आर्थिक विषमता वाले समाज में जनतंत्र हमेशा खतरे में रहेगा। भूदान

आंदोलन की सीमाओं को भी जेपी पहचान गए थे। मुसहरी के अनुभवों के बाद वे शांतिपूर्ण जन संघर्ष की जरूरत को बड़ी शिद्दत से महसूस करने लगे थे। 'फेस टू फेस' (आमने-सामने) नामक अपनी पुस्तिका में उन्होंने अपने विचारों को स्पष्ट किया था। बिहार में भूमि सुधार कानूनों को लागू करवाने और बड़े भूमिपतियों द्वारा अवैध रूप से रखी गई जमीन को मुक्त कराकर उसे भूमिहीन किसानों के बीच वितरित कराने की उनकी तमाम कोशिशें बेकार हो चुकी थीं। इन परिस्थितियों में जब जेपी ने छात्र आंदोलन का नेतृत्व संभाला, तो आंदोलन को एक नैतिक संबल मिला। आंदोलन में अनुशासन आया और छात्रों सहित आमजन की उसमें व्यापक भागीदारी का सिलसिला शुरू हुआ।

8 अप्रैल 1974 को कदमकुआं (पटना) से एक मौन जुलूस निकाला गया। इसमें शामिल लोगों के मुंह पर पट्टी बंधी थी और दोनों हाथ पीछे बंधे थे। तख्तियां लगी थीं- क्षुब्ध हृदय है, बंद जुबान। इस मौन जुलूस में सिर्फ एक हजार लोगों को शामिल होने की इजाजत दी गई थी,लेकिन मौन जुलूस पटना की सड़कों पर जैसे ही उतरा, सड़क के दोनों किनारों पर समर्थक स्त्री-पुरुष, बच्चे, बुजुर्ग सभी उमड़ पड़े। सभी लोग पूरी तरह अनुशासित रहकर मौन जुलूस देखते रहे। जेपी बीमारी की हालत में थे, फिर भी एक जीप में बैठकर मौन जुलूस का नेतृत्व कर रहे थे। प्रॉस्टेट की बीमारी के कारण पाइप लगी पेशाब की बोतल साथ लिए जेपी जुलूस के आगे-आगे चल रहे थे। इस मौन जुलूस ने माहौल पूरी तरह बदल दिया। इसके बाद तो लाखों लोग आंदोलन में शरीक हुए, हजारों छात्र जेपी की पुकार पर अपने कॉलेजों की पढ़ाई छोड़ कर आ गए। आज की युवा पीढ़ी के लिए यह जानना जरूरी है कि वह कौन सी परिस्थितियां थीं, जिनसे उस आंदोलन का जन्म हुआ। वह कौन से सपने थे, जिनके लिए लगभग 36 लोग शहीद हुए, हजारों ने लाठियां खाईं, जेल की यातनाएं सहीं। क्या वे सपने पूरे हुए? क्या आंदोलन मात्र सत्ता परिवर्तन के लिए था?

पांच जून 1974 को पटना के एतिहासिक गांधी मैदान में पांच लाख से ज्यादा स्त्री-पुरुष, छात्र-युवा, मजूदर-किसान और बुद्धिजीवी जुटे थे। इस महती सभा में लोक नायक जयप्रकाश नारायण ने संपूर्ण क्रांति का आह्वान किया था। अपने विस्तृत भाषण में उन्होंने बताया था कि समाज जीवन के सभी क्षेत्रों में असमानता, भेदभाव की समाप्ति तथा समतामूलक जनतांत्रिक समाज की स्थापना इस आंदोलन का उद्देश्य है।

सन् 1974 में संभवतः अक्टूबर का महीना था। जेपी ट्रेन से कटिहार से पटना लौट रहे थे। ट्रेन बेगूसराय रेलवे स्टेशन पर रुकी, हजारों छात्र स्टेशन पर खड़े नारे लगा रहे थे। जेपी ट्रेन से बाहर आए। इसी बीच एक पंडित जी पहुंचे। वे बड़े प्रेम से जेपी को धोती और जनेऊ भेंट में देने लगे। जेपी ने जैसे ही जनेऊ देखा, बोल पड़े- 'मैं तो शूद्र हूं, जनेऊ कैसे पहनूं'? फिर छात्रों की ओर मुखातिब हुए और कहा-'जनेऊ जातीय श्रेष्ठता का प्रतीक है। समाज में ऊंच-नीच का भेदभाव करने वाले इस बंधन को तोड़ डालो।' और देखते ही देखते स्टेशन पर उपस्थित छात्रों ने अपने-अपने जनेऊ तोड़ डाले। जनेऊ का ढेर लग गया। फिर तो जेपी जहां भी जाते, वहां की हर सभा में छात्र जनेऊ तोड़ते। जेपी कहते थे कि यह तथाकथित ऊंची जातियों के छात्रों के अहंकार विसर्जन का कार्यक्रम है। अगर समाज बदलना है तो उन्हें प्रायश्चित करना होगा, क्योंकि सवर्ण जातियों ने हजारों साल तक शूद्रों के साथ भेदभाव किया है। आंदोलन के अंदर इस सवाल पर काफी मतांतर भी थे। कई लोगों ने जेपी से आग्रह भी किया कि इस कार्यक्रम को वापस ले लें। लेकिन जनेऊ तोड़ो अभियान जारी रहा। अफसोस की बात है कि जेपी का जब देहावसान हुआ तो दाह संस्कार के पहले जेपी के मृत शरीर को जनेऊ पहना दिया गया।

इस आंदोलन की एक परिघटना उल्लेखनीय है। सर्वोदय नेता एस जगन्नाथन तमिलनाडु से आए थे। जेपी की सलाह पर उन्होंने बोधगया मठ की नाजायज कब्जे वाली 10 हजार एकड़ जमीन को मुक्त कराने के लिए भूमिहीन किसानों को संगठित किया और भूमि सत्याग्रह की शुरुआत की। उसमें डॉक्टर विनयन और जगदीश भी शामिल थे। आपातकाल के बाद छात्र युवा संघर्ष वाहिनी और मजदूर किसान समिति ने जेपी के निर्देशन में शांतिपूर्ण भूमि मुक्ति आंदोलन चलाकर मठ की नाजायज कब्जे वाली भूमि मुक्त कराई। अफसोस की बात है कि बिहार आंदोलन से निकले लोगों के नेतृत्व में बनी परवर्ती सरकारों ने भूमि के वितरण के प्रश्न को निरंतर टाला है। नीतीश कुमार की सरकार द्वारा गठित बंद्योपाध्याय समिति की रिपोर्ट के अनुसार आज भी बिहार में लगभग 21 लाख एकड़ भूमि बड़े भूपतियों के अवैध कब्जे में है। इतनी ही सरकारी जमीन पर भी भूपतियों ने अवैध कब्जा कर रखा है। ऐसी भूमि उपेक्षित भी है और उसकी अन्न उत्पादकता भी बहुत कम है। अगर यह भूमि भूमिहीन किसानों के हाथों में आ जाए तो अन्न उत्पादन काफी बढ़ जाएगा और सामंती संबंधों के टूटने से बिहार के विकास की गति तेज हो जाएगी। इससे निठल्लेपन, काहिली और दूसरे के श्रम पर मजे उड़ाने की प्रवृत्ति भी समाप्त होगी, उद्यमशीलता तथा सक्रियता का उत्सर्जन भी होगा।

आंदोलन में महिलाओं की व्यापक भागीदारी हुई। इसके साथ स्त्री-पुरुष के बीच के संबंधों को समतामूलक बनाने की बहसें भी तेज हुईं तथा अंतरजातीय विवाहों का सिलसिला भी काफी आगे बढ़ा। सदियों से उत्पीड़ित दलित एवं पिछड़ी जातियों की ऊर्जा का उत्सर्जन हुआ। सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में इसका स्पष्ट दर्शन हो रहा है। अगर आपातकाल नहीं लगता, गांव गांव में बनने वाली जनता सरकारों की श्रृंखला खड़ी हो जाती और सामाजिक, सांस्कृतिक आंदोलन की धारा आगे बढ़ पाती तो संपूर्ण क्रांति का सपना जरूर पूरा होता। इतना जरूर हुआ कि आंदोलन ने जो देशव्यापी चेतना पैदा की थी, उसके कारण आपात काल के रूप में लादी गई 19 महीने की तानाशाही को सन् 1977 के आम चुनाव में देश की जनता ने उखाड़ फेंका। आज राजनीतिक संस्कृति फिर से व्यक्ति केंद्रित हो गई है। भ्रष्टाचार व्याप्त है और जाति की जकड़न भी मौजूद है। एक बात जरूर है कि जनता की जागरूकता काफी बढ़ी है। आज से फिर एक नई शुरुआत की जरूरत है ताकि समतामूलक, जनतांत्रिक समाज बनाने का जेपी का सपना पूरा हो सके। आज की नई पीढ़ी इस दिशा में पहल कर सकती है। ❑

संपूर्ण क्रांति के संदर्भ और कसौटी पर न्यायपालिका

–भवानीशंकर कुसुम

15 दिसंबर 1973 को जेपी ने देश के सभी संसद सदस्यों के नाम एक खुला पत्र लिखा था, जिसमें न्यायपालिका के बारे में की गयी उनकी टिप्पणी आज 47 वर्ष के अंतराल के बाद भी उतनी ही प्रासंगिक है—'यह सर्वमान्य तथ्य है कि यदि मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति पूरी तरह भारत के प्रधानमंत्री के हाथ में है, जो कि वर्तमान घटनाक्रम में प्रासंगिक है, तो देश का सर्वोच्च न्यायिक संस्थान तत्कालीन सरकार की कठपुतली बनकर रह जाता है।'

आगे चलकर संपूर्ण क्रांति आंदोलन की व्याख्या करते समय भूमि सुधारों की चर्चा के दौरान उन्होंने कहा था—'नये कानून बनाने की बात छोड़ दीजिये, यदि विद्यमान कानूनों का भी ईमानदारी से पालन हो जाय, तो देश में एक छोटी-मोटी क्रांति हो जायेगी।' 5 जून की पटना के गांधी मैदान की ऐतिहासिक सभा में तो उन्होंने सीमा सुरक्षा बल तथा बिहार सशस्त्र पुलिस के जवानों से भी अपील की थी कि वे सरकार के अन्यायपूर्ण और गैर कानूनी आदेशों को मानने से इनकार कर दें।

सच्चे लोकतंत्र की स्थापना के संदर्भ में जेपी के संघर्षों की नजर से वर्तमान घटनाक्रम को देखें तो गहरा क्षोभ पैदा होता है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश रंजन गोगोई द्वारा राज्यसभा की सदस्यता के लिए शपथ लेने के बाद देश के राजनैतिक, सामाजिक हलकों में तीव्र प्रतिक्रिया देखने को मिली। उनमें सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश तथा रंजन गोगोई के समकालीन जस्टिस कुरियन जोसफ की टिप्पणी देखांकित करने योग्य है। उन्होंने कहा कि रंजन गोगोई ने न्यायपालिका की स्वतंत्रता तथा निष्पक्षता के उदात्त सिद्धांतों के साथ समझौता किया है। उल्लेखनीय है कि ये वही जस्टिस जोसफ हैं, जिन्होंने सर्वोच्च न्यायालय की कार्यपद्धति पर 12 जनवरी 2018 को जस्टिस गोगोई, जस्टिस चेलमेश्वर तथा जस्टिस मदन लोकुर के साथ अभूतपूर्व प्रेसवार्ता आयोजित की थी।

पूर्व न्यायाधीश जोसफ ने रंजन गोगोई के राज्यसभा में मनोनयन के बाद अपनी प्रतिक्रिया में कहा कि मेरी राय में सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश ने राज्यसभा की सदस्यता स्वीकार करके न्यायपालिका की स्वतंत्रता और आम आदमी के विश्वास को निश्चित रूप से हिला दिया है। उक्त प्रेसवार्ता की चर्चा करते हुए जस्टिस जोसफ ने कहा कि वे अन्य तीन न्यायाधीशों के साथ न्यायपालिका के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों से देश को अवगत कराने के लिए आगे आये थे, लेकिन वह चुनौती आज अधिक व्यापक है। इसे सही साबित करने के लिए सेवानिवृत्ति के बाद उन्हें कोई भी पद स्वीकार नहीं करना चाहिए था।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि रंजन गोगोई पर सर्वोच्च न्यायालय की एक पूर्व कर्मचारी ने यौन उत्पीड़न का आरोप लगाया था। उक्त महिला कर्मचारी ने न्यायालय के कार्यरत न्यायाधीशों, बार और गोगोई को इस शपथपत्र के माध्यम से आरोपों का विवरण देते हुए बताया था कि उसे न केवल सर्वोच्च न्यायालय की सेवाओं से निकाल दिया गया, बल्कि उसे और उसके परिवार को पुलिस द्वारा प्रताड़ित भी किया गया था।

तत्कालीन वित्तमंत्री अरुण जेटली इस प्रकरण में गोगोई के बचाव में हस्तक्षेप करने वाले पहले व्यक्ति थे, उन्होंने रंजन गोगोई पर लगाये गये आरोपों को 'संस्था पर हमला' बताते हुए कहा था कि यह न्यायपालिका के साथ खड़े होने का समय है। उन्होंने हर किसी को '1970 के दशक' में न्यायाधीशों के दमन, न्यायालय को डराने-धमकाने और न्यायाधीशों के स्थानांतरण की याद दिलाते हुए यह कहकर अपनी बात समाप्त की कि, 'इससे निपटने के लिए हमें इसको न्यायालय के विवेक पर छोड़ देना चाहिए।'

न्यायालय का विवेक आरोपों की छानबीन के लिए तीन न्यायाधीशों के पैनल के गठन के पक्ष में था, लेकिन पैनल को विभागीय, घरेलू या कथित यौन उत्पीड़न की जांच करने का अधिकार प्राप्त नहीं था। इस पैनल ने अपनायी जाने वाली प्रक्रिया से शिकायतकर्ता को अवगत नहीं कराया, यहां तक कि अपनी कार्यवाही का कोई दस्तावेज भी उसे नहीं दिया। इस पैनल के समक्ष प्रस्तुत होने पर उसे वकील रखने की भी अनुमति नहीं दी गयी। विरोध स्वरूप उसने स्वयं को कार्यवाही से अलग कर लिया। न्यायिक प्रक्रिया के इस उपहास के प्रति निराशा प्रकट करने के लिए जो लोग सर्वोच्च न्यायालय के बाहर एकत्र हुए थे, उनको पुलिस हिरासत में ले लिया गया। पैनल ने एकतरफा कार्यवाही जारी रखी और घोषित किया कि 'आरोप में कोई दम नहीं है।' न्यायालय ने यह पता लगाने के आदेश पारित किये कि कहीं शिकायतकर्ता मुख्य न्यायाधीश के विरुद्ध किसी साजिश का हिस्सा तो नहीं है। यह जांच चल रही है।

2012 में जब अरुण जेटली राज्यसभा में विपक्ष के नेता थे, तब उन्होंने कहा था, 'रिटायरमेंट के फौरन बाद जजों को किसी नये सरकारी पद पर नियुक्त करना न्यायपालिका की स्वतंत्रता के लिए खतरनाक हो सकता है।' उनका कहना था, 'सेवानिवृत्ति से पहले लिये गये फैसले सेवानिवृत्ति के बाद मिलने वाले पद की चाहत से प्रभावित होते हैं। दो सालों (नियुक्ति से पहले) का अंतराल होना चाहिए, अन्यथा सरकार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अदालतों को प्रभावित कर सकती है और एक स्वतंत्र, निष्पक्ष और ईमानदार न्यायपालिका कभी भी वास्तविकता नहीं बन पायेगी।

लेकिन उनकी इस सलाह की उनकी ही सरकार ने किस कदर बेकद्री की, रंजन गोगोई इसके ताजा उदाहरण हैं। यह एकमात्र उदाहरण नहीं हैं, ऐसी ही तीखी प्रतिक्रिया उस समय भी आयी थी, जब सितंबर 2014 में भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश पी. सदाशिवम को केरल का राज्यपाल बनाया गया था। उस समय यह कहते हुए उनकी व्यापक आलोचना हुई थी कि उन्हें सत्तारूढ़ दल की मदद करने का ईनाम मिला है। उन पर आरोप था कि उन्होंने तुलसीराम प्रजापति मामले में तत्कालीन भाजपा अध्यक्ष अमित शाह के विरुद्ध दर्ज दूसरी

प्राथमिकी (एफआईआर) को रद्द कर दिया था। यद्यपि जस्टिस सदाशिवम ने स्पष्ट किया था कि राज्यपाल के पद पर उनकी नियुक्ति का इस प्रकरण से कोई लेना-देना नहीं है। इसके बाद पिछले कुछ वर्षों के दौरान की गयी तीन नियुक्तियां इस दिशा में गंभीर चेतावनी हैं।

एक-जस्टिस आर. के. अग्रवाल 4 मई 2015 को सर्वोच्च न्यायालय से सेवानिवृत्त हुए और मई के अंतिम सप्ताह में उन्हें नेशनल कन्ज्यूमर रिड्रेशन कमीशन (एनसीडीआरसी) का अध्यक्ष बना दिया गया। जस्टिस आर. के. अग्रवाल उस बेंच के अध्यक्ष थे, जिसने सीबीआई के विशेष निदेशक के रूप में आर. के. अस्थाना की नियुक्ति से संबंधित केन्द्र सरकार के फैसले को चुनौती देने वाली याचिका रद्द कर दी थी। जस्टिस अग्रवाल उस बेंच का भी हिस्सा थे, जिसने जस्टिस चेलमेश्वर की बेंच के उस आदेश को रद्द कर दिया था, जिसमें मेडिकल कॉलेज रिश्वत मामले में जांच के आदेश दिये गये थे। अर्थात जस्टिस अग्रवाल उन मामलों को देख रहे थे, जिनमें सरकार और भारत के मुख्य न्यायाधीश शामिल थे।

दो-केरल उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश जस्टिस एन्टोनी डोमिनिक 29 मई 2018 को सेवानिवृत्त हुए और एक सप्ताह बाद ही उन्हें राज्य मानवाधिकार आयोग का अध्यक्ष बना दिया गया। जस्टिस एन्टोनी ऐसे मामलों को देख रहे थे, जो केरल की सत्तारूढ़ पार्टी को राजनैतिक रूप से प्रभावित करने वाले थे।

तीन-जस्टिस ए. के. गोयल को 6 जुलाई 2018 को सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश पद से सेवानिवृत्त होने के दिन ही नेशनल ग्रीन ट्रिब्युनल का अध्यक्ष बना दिया गया।

2001 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय में नियुक्त ए. के. गोयल के बारे में इन्टेलीजेंस ब्यूरो की जांच में पता चला था कि वे आरएसएस की शाखा 'अखिल भारतीय अधिवक्ता परिषद' के महामंत्री थे। उस समय अरुण जेटली के नेतृत्व वाले कानून मंत्रालय ने ए. के. गोयल के नामांकन को प्रमाणित किया था। तत्कालीन राष्ट्रपति के. आर. नारायणन ने गोयल की नियुक्ति के आदेश पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर पत्रावलि मंत्रालय को वापस भेज दी। फिर पत्रावलि को कोलेजियम को वापस भेजने के बजाय जेटली ने गोयल के नामांकन का बचाव करते हुए आई. बी. के निष्कर्षों को मिथ्या आरोप बताकर रद्द कर दिया। जब दुबारा वही पत्रावलि तत्कालीन प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी के हस्ताक्षरों के साथ राष्ट्रपति नारायणन के पास भेजी गयी, तो उन्होंने अनिच्छा पूर्वक हस्ताक्षतर तो कर दिये, लेकिन मंत्रालय को लिखा कि मैं महसूस करता हूं कि कार्यवाही के अधिक वांछनीय मार्ग के रूप में वही प्रक्रिया अपनायी जानी चाहिए थी, जिसमें चयन प्रक्रिया के अभिन्न अंग मुख्य न्यायाधीश का सुझाव विधिवत प्राप्त किया जाता है। मैं इस बात की भी कद्र करता, यदि मेरी टिप्पणियों को भारत के मुख्य न्यायाधीश के साथ साझा किया जाता।

न्यायपालिका में विधायिका तथा कार्यपालिका के हस्तक्षेप से न्यायपालिका की स्वतंत्रता को बाधित करने वाले प्रकरणों की लंबी सूची है। 44वें मुख्य न्यायाधीश जे. एस. खेहर को अरुणाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री (2016) कालिझोपूल की मौत के मामले की जांच का सामना करना पड़ा था। भारत के 45वें मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा को एक मामले को प्रभावित करने के उद्देश्य से रिश्वत मांगने के लिए एक पूर्व न्यायाधीश की मुद्रित बातचीत के प्रकरण का सामना करना पड़ा था। दीपक मिश्रा वह पहले मुख्य न्यायाधीश थे, जिनके निष्कासन का प्रस्ताव विपक्ष ने संसद में रखा था।

ये सारे प्रकरण क्या संकेत देते हैं? स्पष्ट है, विधायिका और कार्यपालिका का दबाव या सेवानिवृत्ति के बाद लाभ का पद प्राप्त करने का मोह निष्पक्ष और स्वतंत्र न्यायपालिका के प्रति आम आदमी की आस्था और विश्वास को गहरी चोट पहुंचाता है। विधायिका और कार्यपालिका से पहले ही निराश व्यक्ति स्वयं को ठगा सा महसूस करता है। फिर भी राजनीति के दांव-पेंच से पीड़ित व्यक्ति न्याय पाने की उम्मीद में न्यायालय की तरफ ही देखता है।

इन न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति के तत्काल बाद हुई नियुक्तियों से यह आभास होता है कि संबंधित सरकारों ने इनकी नियुक्ति का फैसला इनके कार्यकाल के दौरान ही ले लिया था, जिस पर अनेक लोगों ने सवाल खड़े किये। इससे उन फैसलों पर प्रश्नचिन्ह लगना स्वाभाविक लगता है, जिनसे संबंधित सरकारों का हित साधन जुड़ा हुआ था, क्योंकि इन अर्द्ध न्यायिक इकाइयों में नियुक्ति सरकार ही करती है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि न्यायिक स्वतंत्रता संविधान प्रदत्त अधिकारों और विशेषाधिकारों के सुरक्षा कवच के रूप में काम करती है तथा कार्यपालिका और विधायिका द्वारा किये जाने वाले अतिक्रमण को रोकती है। लेकिन दुर्भाग्यवश इतने सारे सुरक्षा उपायों के बावजूद हमारी न्यायपालिका को कितने अवांछनीय दबावों का सामना करना पड़ता है, यह हमने कई बार अनुभव किया है।

नरेन्द्र मोदी के मुख्यमंत्रित्व काल में गुजरात में हुए दंगों के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने उन्हें 'आधुनिक काल के नीरो' की संज्ञा दी थी, जो मासूम बच्चों और लाचार महिलाओं को जलाये जाते समय कहीं और देख रहा था। इससे भी अधिक चिन्ता की बात ये थी कि भाजपा का पैतृक निकाय राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ लंबे समय से न्यायपालिका में हिन्दुत्व की विचारधारा को प्रविष्ट कराने के लिए प्रयत्नशील था। 1995 में हुए अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के सम्मेलन में भारत सरकार के पुनर्गठन के प्रस्ताव का जो प्रारूप वितरित किया गया था, उसमें साधु-संन्यासियों की एक 'गुरुसभा' के निर्माण का प्रस्ताव था। यह गुरुसभा अन्य कार्यों के अलावा न्यायिक आयोग की तरह काम करती, जिसके पास सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का नामांकन करने और अभियोग चलाने का अधिकार होता, इसकी जानकारी भाजपा के वर्तमान सांसद सुब्रण्यम स्वामी ने एक पत्रिका में 'आरएसएस का गेमप्लान' शीर्षक से प्रकाशित लेख में दी थी।

यह प्रस्ताव भले ही काल्पनिक लगता हो, लेकिन हिन्दुत्व का न्यायपालिका में हस्तक्षेप बहुत पहले एक वास्तविकता बन चुका था, इसकी पुष्टि जस्टिस ए. के. गोयल की नेशनल ग्रीन ट्रिब्युनल के अध्यक्ष पर पर विवादास्पद नियुक्ति से होती है। यह तलवार आज भी न्यायपालिका पर लटकी है। देश की न्यायपालिका आज कसौटी पर है। देखना है, वह आने वाले समय में इस पर खरी उतरती है और अपनी गरिमा को बचाये रखती है या नहीं? ❑

विनम्र श्रद्धांजलि

कमलाताई रजपूत व रामसिंह रजपूत

महाराष्ट्र के वरिष्ठ सर्वोदय कार्यकर्ता, भूदानदाता और राष्ट्रसंत तुकड़ोजी महाराज प्राकृतिक शिक्षा संस्थान, अकोला के संस्थापक एडवोकेट रामसिंह रजपूत की धर्मपत्नी कमलाताई का 19 मई 2020 को निधन हो गया। वे 88 वर्ष की थीं। वे जीवन भर एडवोकेट राम सिंह रजपूत के साथ उनके सामाजिक सेवा कार्यों में सहयोगी बनी रहीं। उनके निधन से सामाजिक सेवा के क्षेत्र में एक शून्य पैदा हो गया है। उल्लेखनीय है कि मृत्योपरांत कमलाताई का श्राद्ध नहीं किया गया। संत तुकड़ोजी और अकोला के वृद्धाश्रमों में तथा सेवाग्राम आश्रम स्थित कुष्ठ सेवाश्रम में भरती वृद्धों और मरीजों के बीच भोजन बांटा गया। परिवार ने कोरोना मरीजों के इलाज के लिए रुपये 15 हजार दान भी किये।

कमलाताई के निधन के 11 दिन बाद ही आश्चर्यजनक रूप से उनके पति और वयोवृद्ध सर्वोदयी रामसिंह रजपूत का भी देहांत हो गया। 30 मई की रात 3 बजे अकोला में ही उनका भी निधन हुआ। आजादी के आंदोलन के दिनों में वे जुलूसों में भाग लेते थे, पर उस समय पुलिस ने उन्हें कभी गिरफ्तार नहीं किया। इस बात का उन्हें रंज रहा। उन्होंने सरकारी सेवा में रहते हुए कानून की पढ़ाई की। सर्वोदय कार्यकर्ता के तौर पर वे आजीवन वंचितों और पीड़ितों की सेवा में लगे रहे। उन्होंने भूदान आंदोलन में जमीन भी दी। उन्हें आजीवन इस बात का अफसोस रहा कि भूदान की जमीनों का गलत वितरण होने के साथ-साथ उनका दुरुपयोग भी हो रहा है।

भवानीचरण पटनायक

उड़ीसा के समाजसेवी और पद्मश्री भवानीचरण पटनायक का 14 मई 2020 को भुवनेश्वर में देहांत हो गया। वे 99 वर्ष के थे। देश की आजादी में उनके अविस्मरणीय योगदान ने उन्हें इतना लोकप्रिय बना दिया था कि वे तीन बार राज्यसभा के लिए चुने गये। उड़ीसा में खादी के प्रसार के क्षेत्र में उनके काम ने बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित किया। अपने त्याग और समर्पण के चलते वे युवाओं के बीच मिसाल बन गये थे। वे बीजू पटनायक के सहयोगी थे। 11 मई 1922 को पुरी जिले में पैदा होने वाले भवानीचरण पटनायक को 2018 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया। आम आदमी के जीवन में बेहतरी के लिए किये गये उनके प्रयासों के लिए उन्हें सदैव याद किया जायेगा। कोरोना संकट उत्पन्न होने के बाद अपने अंतिम समय तक वे लोगों को सावधान करते रहे। गांधी की वैचारिक प्रेरणा से जीवन भर कर्मयोगी रहे भवानीचरण पटनायक का जाना एक युग का अंत है।

डॉ. गोपालराजू विजयन

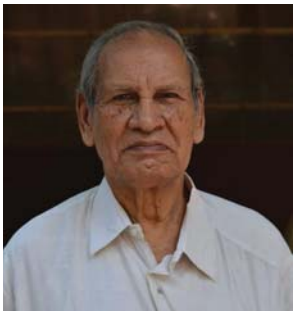

वरिष्ठ सामाजिक कार्यकर्ता, नास्तिक केन्द्र के निदेशक, एथीस्ट पत्रिका के संपादक तथा गांधीजी के सहयोगी गोराजी के सुपुत्र डॉ. गोपालराजू विजयन का 22 मई 2020 को विजयवाड़ा में निधन हो गया। वे 84 वर्ष के थे।

वे गांधी विचार के शोधार्थी तथा सर्वोदय आंदोलन की महत्त्वपूर्ण कड़ी थे। उन्होंने गांधी शांति प्रतिष्ठान के साथ मिलकर काम किया। वे राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक थे। विश्वशांति और पर्यावरण संरक्षण के लिए आजीवन कार्यरत रहे। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों के लिए लड़ने वाले सजग कार्यकर्ता के तौर पर उनकी ख्याति थी। वे एथीस्ट सेंटर विजयवाड़ा के निदेशक थे। 1 दिसंबर 1936 को पैदा होने वाले विजयन को अंतर्राष्ट्रीय जगत में एक समाज सुधारक के तौर पर जाना जाता है।

प्रकाशन के लेखाकार सुरेन्द्र सिंह को मातृशोक

सर्व सेवा संघ प्रकाशन के लेखाकार सुरेन्द्र सिंह की माता चम्पा देवी का 13 मई 2020 को निधन हो गया। वे लगभग 89 वर्ष की थीं। वे अंतिम समय तक पूरी तरह स्वस्थ थीं। मृत्यु के कुछ समय पहले तक वे अपनी रुचि के कामों में लगी रहीं।

13 मई को अचानक उनकी तबियत खराब हुई और वे देखते ही देखते चल बसीं। अचानक उनके निधन की खबर पाकर सर्व सेवा संघ परिसर और प्रकाशन के साथी कार्यकर्ता उनके घर पहुंचे और उनकी अंतिम यात्रा में शामिल हुए। महाश्मशान रैपुरिया (नारायनपुर) घाट पर उनके ज्येष्ठ पुत्र इकबाल नारायण जी ने उन्हें मुखाग्नि दी।

उल्लेखनीय है कि वे अपने पीछे दो बेटों, दो बहुओं और नाती-पोतों से भरा पूरा परिवार छोड़ गयी हैं।

सर्व सेवा संघ सभी दिवंगतों को अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है तथा दुख संतप्त परिवारों के प्रति अपनी हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

सामाजिक और आर्थिक आपातकाल का दौर
(प्रवासी मजदूरों पर आंखें खोलने वाली रिपोर्ट)

मध्य प्रदेश की सामाजिक संस्था 'विकास संवाद' ने लॉकडाउन के चलते अपने गांव लौटने वाले मजूदरों को लेकर 'प्रवासी मजदूरों की बात' के नाम से एक रिपोर्ट जारी की है। मध्यप्रदेश में पलायन का सबसे अधिक दंश झेलने वाले 10 जिलों में प्रवासी मजदूरों से बात करने के बाद जो तथ्य समाने आए, वे आने वाले समय में एक बड़े संकट का इशारा कर रहे है।

चुनौतियाँ

रिपोर्ट के मुताबिक महानगरों से गांव लौटे 91.2 फीसदी प्रवासी मजदूर मानते हैं कि अब वे बेरोजगारी के संकट में फंसेगे, वहीं 81 फीसदी, बीमारियों के फैलाव और उपचार व्यवस्था की कमी को संकट मानते हैं। इसके साथ ही 82.3 फीसदी मजदूर मानते हैं कि उन पर क़र्ज का संकट आएगा, जबकि 76.5 फीसदी भुखमरी फैलने की आशंका में भी हैं. वापस आये 53.5% प्रवासी मजदूर मानते हैं कि उन्हें अपनी बुनियादी जरूरतें पूरी करने के लिए जमीन, सामान तथा महिलाओं के गहने बेचने पड़ेंगे।

देश की झलक दिखाती रिपोर्ट

'विकास संवाद' से जुड़े सामाजिक कार्यकर्ता राकेश मालवीय कहते हैं कि ये जो रिपोर्ट है, वह केवल मध्यप्रदेश की है, लेकिन इसमें राष्ट्रीय झलक देखी जा सकती है। हर कहीं प्रवासी मजदूर इस विभीषिका को झेल रहे है और हम उन्हें संरक्षण देने में नाकामयाब हुए है। वे कहते हैं कि कोरोना संकट केवल स्वास्थ्य सम्बन्धी आपातकाल नहीं है, यह एक सामाजिक और आर्थिक आपातकाल भी है, जिसने देश को अनिश्चितता के भंवर में फंसा दिया है।

इन परिस्थितियों में सरकारों को तुरंत ही जमीनीं स्तर पर ध्यान देने की जरूरत है। गांव पहुंचे प्रवासी मजदूरों के सामने कृषि और मनरेगा ही आखिरी विकल्प हैं और आज इन दोनों को मजबूत करने की जरूरत है। राकेश मालवीय कहते हैं कि सरकार भले ही मनरेगा में मजदूरों को रोजगार देने के दावे कर रही है, लेकिन आज भी मनरेगा का लाभ जरूरतमंदों तक नहीं पहुंच पा रहा है और अगर पहुंच भी रहा है तो बहुत सीमित है।

वापस नहीं जाना चाहते आधे से ज्यादा मजदूर

लॉकडाउन के दौरान प्रवासी मजदूरों का किस तरह के व्यवहार, आर्थिक असुरक्षा, संकट और दर्द से सामना हुआ है, उसको भी ये रिपोर्ट बखूबी दिखाती है। रिपोर्ट के मुताबिक अध्ययन क्षेत्र में वापस पहुंचे 54.6 फीसदी प्रवासी मजदूर अब पलायन पर बिलकुल नहीं जाना चाहते हैं, वहीं 24.5% अभी तय नहीं कर पाए हैं कि अब वे फिर जायेंगे या नहीं और यदि जायेंगे तो कब? 21% कामगार स्थितियां सामान्य होते ही पलायन पर जाना चाहेंगे।

जेब में पैसे नहीं

वापस पहुंचे 23 फीसदी मजदूरों के पास 100 रुपये से भी कम राशि शेष बची थी, वहीं 7% मजदूरों के पास वापस पहुँचने के वक्त 1 रुपये भी शेष नहीं थे। 25.2% मज़दूरों के पास रु. 101 से 500 रुपये शेष बचे थे और 18.1% के पास रु. 501 से 1000 रूपये शेष थे. केवल 11% मजदूर ऐसे थे, जिनके पास रु. 2001 से ज्यादा की राशि शेष थी.

विकास संवाद की ओर से जारी रिपोर्ट मजदूरों की दुर्दशा को भी दिखाती है। रिपोर्ट के मुताबिक 81 फीसदी मजदूरों को उनके काम की अवधि में कोई छुट्टी नहीं मिलती.जिस दिन वे काम पर नहीं जाते हैं, उनको काम का पैसा नहीं मिलता है। इसके साथ ही 86 फीसदी से अधिक मजदूरों की मजदूरी का भुगतान नकद रूप में होता है। चूंकि मजदूरी भुगतान की अवधि अलग-अलग होती है, जैसे किसी को दैनिक भुगतान होता है, किसी को साप्ताहिक या मासिक और किसी स्थिति में घर वापसी पर मजदूरी का भुगतान होता है, इसलिए कोविड-19 के कारण अचानक हुए लॉकडाउन के कारण 47 प्रतिशत मजदूरों को उनकी मजदूरी का पूरा भुगतान नहीं हो सका था। **-मीडिया स्वराज**

गर लौट सका तो जरूर लौटूंगा, तेरा शहर बसाने को।

आज मत रोको मुझको,
बस मुझे अब जाने दो।।
मै खुद जलता था,
तेरे कारखाने की भट्टियां जलाने को,
मै तपता था धूप में
तेरी अट्टालिकायें बनाने को।
मैने अंधेरे में खुद को रखा,
तेरा चिराग जलाने को।
मैने हर जुल्म सहे,
भारत को आत्मनिर्भर बनाने को।
मै टूट गया हूँ,
समाज की बंदिशों से।
मै बिखर गया हूँ,
जीवन की दुश्वारियों से।
मैने भी एक सपना देखा था,
भर पेट खाना खाने को।
पर पानी भी नसीब नहीं हुआ,
दो बूंद आँसूं बहाने को।
मुझे भी दुःख में मेरी माटी बुलाती है।
मेरे भी बूढ़े माँ-बाप मेरी राह देखते हैं।
मुझे भी अपनी माटी का कर्ज़ चुकाना है।
मुझे मां-बाप को
वृद्धाश्रम नहीं पहुंचाना है।
मै नाप लूंगा सौ योजन पांव के छालों पर।
मै चल लूंगा मुन्नन को रखकर कांधों पर।
पर अब मै नहीं रुकूँगा,
जेठ के तपते सूरज में।
मै चल पड़ा हूँ,
अपनी मंज़िल की ओर।
गर मिट गया अपने गाँव की मिट्टी में,
तो खुशनसीब समझूंगा।
और गर लौट सका तो जरूर लौटूंगा,
तेरा शहर बसाने को।
पर आज मत रोको मुझको,
बस मुझे अब जाने दो।।

'Sarvodaya Jagat' Hindi Fortnightly
Registered under RNI No. 35495/78, Postal Registration No. VSI-(E) 04, Valid upto 31 December 2020
Issued by S.S.P.O. Varanasi (East Division)

तीन कविताएं

तुम कागज पर लिखते हो

❑ भवानीप्रसाद मिश्र

तुम काग़ज़ पर लिखते हो,
वह सड़क झाड़ता है।
तुम व्यापारी,
वह धरती में बीज गाड़ता है।
एक आदमी घड़ी बनाता
एक बनाता चप्पल,
इसीलिए यह बड़ा और वह छोटा
इसमें क्या बल।

सूत कातते थे गाँधी जी
कपड़ा बुनते थे,
और कपास जुलाहों के जैसा ही
धुनते थे,
चुनते थे अनाज के कंकर
चक्की पीसते थे,
आश्रम के अनाज याने
आश्रम में पिसते थे,
जिल्द बाँध लेना पुस्तक की
उनको आता था,
भंगी-काम सफाई से
नित करना भाता था।
ऐसे थे गाँधी जी
ऐसा था उनका आश्रम
गाँधी जी के लेखे
पूजा के समान था श्रम।

एक बार उत्साह-ग्रस्त
कोई वकील साहब
जब पहुँचे मिलने
बापूजी पीस रहे थे तब।
बापूजी ने कहा - बैठिये
पीसेंगे मिलकर
जब वे झिझके
गाँधीजी ने कहा
और खिलकर
सेवा का हर काम
हमारा ईश्वर है भाई
बैठ गये वे दबसट में
पर अक्ल नहीं आई।

कैसा संत हमारा गांधी

❑ सागर निज़ामी

कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा!

दुनिया गो थी दुश्मन उसकी, दुश्मन था जग सारा।
आखिर में जब देखा साधो, वह जीता जग हारा।।

कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा!

सच्चाई के नूर से उसके मन में था उजियारा।
बातिन में शक्ती ही शक्ती, ज़ाहिर में बेचारा।।

कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा!

बूढ़ा था या नए जनम में बंसी का मतवारा।
मोहन नाम नहीं था, पर साधो रूप वही था सारा।।

कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा!

भारत के आकाश पे वो है एक चमकता तारा।
सचमुच ज्ञानी, सचमुच मोहन सचमुच प्यारा-प्यारा।।

कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा!

विश्ववंद्य बापू! आओ

❑ जगन्नाथ त्रिपाठी

ओ चिर-संयम की तपो मूर्ति!
तपो-व्योम के विभ्राट्
परिव्राजक सम्राट्!
दर्शन-गिरि-श्रृंग!
विश्व-वंद्य बापू!
अब आओ,
आओ, भारत को तुम्हारी आज
बेहद ज़रूरत है।

यह आर्यावर्त्त, महान साधना
औ चरित्र का महादेश,
जिसे तुमने अपने
श्रम-सीकरों से सींचा था,
असमय ही मुरझा गया
इस बाग़ के घेरे में
जीवन स्थिर, गतिहीन हो गया है इसीलिए,
रंगीन क्यारियों में कीचड़ नज़र आता है।
अस्तु, आओ;
भानु रश्मियों से रञ्जित संदेश लिए तुम आओ;
पंकज के पीले पराग में मृदु मधु बनकर आओ;
हेमरंजिता भूमि-पटी पर प्रेम सुलिपि लिख जाओ।
विश्ववंद्य बापू!
अब आओ! और देखो-
'रघुपति राघव राजा राम' की धरती पर
हिंसा का अकाण्ड ताण्डव देखो,
देखो, तुम्हारी अहिंसा-आस्था
और ईमान की गीता,
आधुनिकता की रंगीन मधुशालाओं में
वेश्या बनकर
ठुमुक ठुमुक कर नाच रही है।
दो दानों की उम्मीद लिए
जिन्दगी सलाम बन गयी है।
बेताज बादशाही मन की
हस्ती गुमनाम हो गई है।
मजदूरी से घर की दुनिया
मरघट की शाम बन गई है।
बापू! तेरी कुर्बानी की
पालित-पोषित प्यारी बेटी
प्रौढ़ावस्था में इतस्ततः
बारूदी घेरे में निशि-दिन
प्राणों की रक्षा में आकुल
आखिरी साँस गिन रही है
अस्तु, अब आओ, आओ,
विश्ववंद्य बापू!
अब आओ,
भारत को तुम्हारी
आज बेहद ज़रूरत है!! ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए प्रकाशक अरविन्द अंजुम द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार